पुरुषादानी श्री जयवर्द्धन पार्श्वनाथ भगवान्

युगद्दष्टा आचार्य आत्म-वल्लभ सूरीश्वरजी के समुदायवर्ती
जिन शासन प्रभावक, तपोमूर्ति आचार्य देव

[illegible]द् विजय हीकार सूरीश्वरजी महाराज सा.

[illegible] ८

[illegible] सुद १३
[illegible] २००६

आचार्य पद
माघ सुद ५
स २०२१

देवलोक गमन
२० अप्रेल, ९२
नागेश्वर तीर्थ

तप, जप, सयम
के
उस महान्
आराधक को
जिनकी नवकार
महामत्र मे अटूट
आस्था थी ।
ऐसी महान्
विभूति को
शत्-शत् वन्दन ।

— सौजन्य से —
केसरीचन्द सिंघी, तरसेमकुमार पारख, नरेन्द्र कोचर, राकेश मोहनोत, जयपुर

34वां पुष्प

वि. सं. 2049

भादवा सुदी 1, शुक्रवार
दिनांक 28 अगस्त, 1992

कार्यालय
आत्मानन्द सभा भवन
घीवालों का रास्ता
जयपुर
फोन [illegible]

माणिभद्र

महावीर जन्म वांचना दिवस

卐

श्री जैन श्वेताम्बर तपागच्छ संघ का वार्षिक मुख-पत्र

श्री जैन श्वे तपागच्छ सघ, जयपुर की स्थायी प्रवृत्तियाँ

1 श्री सुमति नाथ भगवान का तपागच्छ मन्दिर,
घीवालो का रास्ता, जयपुर ।

2 श्री सीमधर स्वामी मन्दिर
पाँच भाइयो की कोठी, जनता कॉलोनी, जयपुर ।

3 श्री रिखब देव स्वामी मन्दिर
ग्राम वरखेडा, शिवदासपुरा (जयपुर)

4 श्री शान्ति नाथ स्वामी मन्दिर
ग्राम चन्दलाई, शिवदासपुरा (जयपुर)

5 श्री जैन चित्रकला दीर्घा एव भगवान महावीर के जीवन चरित्र का भीति चित्रो मे सुन्दरतम चित्रण, सुमति नाथ भगवान का तपागच्छ मन्दिर, घीवालो का रास्ता, जयपुर

6 श्री आत्मानन्द सभा भवन, घीवालो का रास्ता, जयपुर

7 श्री जैन श्वेताम्बर तपागच्छ उपाश्रय, मारूजी का चौक, जयपुर

8 श्री वर्धमान आयम्बिल शाला, आत्मानन्द सभा भवन, जयपुर

9 श्री जैन श्वे भोजनशाला, आत्मानन्द सभा भवन, जयपुर

10 श्री आत्मानन्द जैन धार्मिक पाठशाला
आत्मानन्द सभा भवन, जयपुर

11 श्री जैन श्वे मित्र मण्डल पुस्तकालय एव सुमति ज्ञान भण्डार
आत्मानन्द सभा भवन, जयपुर

12 श्री समुद्र इन्द्रदिन्न साधर्मी सेवा कोष

13 स्वरोजगार प्रशिक्षण, उद्योगशाला

14 जैन उपकरण भण्डार, घीवालो का रास्ता, जयपुर

15 "माणिभद्र" वार्षिक मुख पत्र

श्री सीमन्धर स्वामी भगवान

आचार्य श्री हिरण्य प्रभ सूरीश्वरजी म० सा०

बाल ब्रह्मचारी पूज्यपाद महाराज साहब का

भारतवर्ष की सस्कृति मे छोटे–मोटे सब प्राणियो की रक्षा करने की खामीयत है। भारतवर्ष मे भी गुजरात की पावन धरा अत्यन्त पवित्र सस्कारमय, त्यागी पुरुष को जन्म देने वाली है।

गुजरात की पावन भूमि श्री हेमचन्द्राचार्य आचार्य नेमसूरी, आचार्य सागरानद सूरी, आचाय लब्धिसूरी, आचार्य श्री विजय वल्लभ सूरीश्वरजी, कुमारपाल महाराज, महामत्री वस्तुपाल, तेजपाल एव महात्मा गाधी, स्वामी विवेकानन्द तथा दयानन्द की जन्म-भूमि है, जिन्होंने त्याग, तपस्या एव विद्वत्ता आदि गुणो से देश का महान् उत्थान किया है।

आचाय श्री हिरण्य प्रभसूरीजी महाराज भी इसी पावनधरा के महान् प्रभावक, उपकारी, अनेक जीवो के उद्धारक रत्न चिन्तामणि समान सत हैं। सबका कल्याण उनके जीवन का लक्ष्य है। आप हमेशा सत्य, अहिसा अपरिग्रह आदि मानवीय गुणो का प्रचार कर रहे हें।

पूज्य आचाय भगवत का जन्म उत्तरी गुजरात के जिला विजापुर के मानसा गाव मे भादवा सुदी १० स १९८५ के दिन हुआ था। पिता ववलभाई और माता मणीबेन ने अपने लाडले का नाम रमणीक लाल रखा। पिता ववलभाई व्यापार के लिए वडौदा जिले मे छोटा उदेपुर मे रहते थे। अत रमणीक लाल का बाल्यकाल एव प्राथमिक शिक्षा छोटा उदेपुर मे हुई।

बाल्यकाल से ही आप तेजस्वी होने के साथ-साथ राजनैतिक आन्दोलन मे भाग लिया करते थे। लौह पुरुष सरदार वल्लभ भाई पटेल के साथ स्वतत्रता सेनानी के रूप मे भी आपने काय किया। बाल्यकाल मे आपको धमरुचि नही थी, लेकिन आपका जीवन सुसस्कारी और पवित्र रहा था। एक बार दोस्त की सगत से साधु भगवत समागम हुआ और आप म वैराग्य के बीज अकुरित होने लगे। आप श्री ने जैन धर्म का अभ्यास किया। आपकी दिक्षा लेने की भावना को देखते हुये आपके माता-पिता ने दीक्षा की अनुमति दे दी। कार्तिक वदि ६ सवत् २००७ के शुभ दिन आप मोह माया के बन्धन को छोडकर, जग से नाता

आचार्य श्री हिरण्यप्रभसूरीजी जीवन परिचय

छोड़ कर आचार्य श्री नवीन सूरी जी महाराज के पास दीक्षा ग्रहण की। [illegible] काल से बालब्रह्मचारी मुनि हिरण्य विजय बने।

दीक्षा लेने के बाद धार्मिक अभ्यास के साथ-साथ आपने बेंगलोर से मैट्रिक की परीक्षा पास की। सुवर्ण के सोपान चढ़ते-चढ़ते आप श्री ने जैन तत्त्व ज्ञान ज्योतिष आदि अनेक ग्रंथों का अध्ययन किया, फिर पन्यास पदवी प्राप्त की। संवत् २०४७ में पौष वदी १ के दिन अहमदाबाद में आचार्य की पदवी आचार्य श्री नवीन सूरीजी द्वारा दी गई। आपकी आत्म साधना दिन दुगुनी रात चौगुनी बढ़ती गई। आपने बंबई, सूरत, मद्रास, कलकत्ता, बेंगलोर, मैसूर आदि शहरों में अनेक चातुर्मास किये है।

आत्म कमल लब्धि सूरिश्वरजी के समुदाय में परम पूज्य आचार्य नवीन सूरिश्वर जी महाराज साहब के प्रथम शिष्य होने के बाद परम पूज्य आचार्य लब्धि सूरिश्वरजी महाराज के सान्निध्य में आपने वैयावच्च का लाभ सुन्दररूप से लिया, उन्हीं की निश्रा में व्याकरण आदि का अभ्यास किया। आप संगीत में भी कुशल है। यह सब आपको गुरुदेव की ही देन है।

आपने समत्व भावना, मैत्री भावना, करुणा को अपने जीवन में आत्मसात किया है। इस कारण से आपके हृदय में किसी आत्मा के प्रति राग, द्वेष, ईर्षा या तिरस्कार की भावना नहीं है। "मैत्री भावन पवित्र झरणुं मुज हैया मां वहा करे" यह भावना को लेकर आप अपना जीवन सार्थक कर रहे है। [illegible] आप [illegible] में धर्म देशना से समझा रहे है। छोटी-बड़ी [illegible] [illegible] में आयोजित हो रहे है।

[illegible]

प्रवीणा मिलनभाई शाह

दिनाक 2 जुलाई, 1992
नगर प्रवेश जुलूस
का
विहगम दृश्य

पू आ श्री हीरण्यप्रभ सूरीश्वरजी म
आत्मानन्द सभा भवन मे आयोजित
धर्म सभा मे उद्बोधन देते हुए। मुनि
श्री भाग्यशेखर विजयजी म सा
मुनि श्री भाग्यपूर्ण विजयजी
म भी विराजमान है।

मा श्री हीरासिंह चौहान
उपाध्यक्ष
राजस्थान विधान सभा
आचार्य श्री का अभिनन्दन
करते हुए

आदरणीय साधु-सन्तों एवं की क्रमवार रचनाएँ

हमारे प्रबुद्ध लेखकों के विचारों एवं वार्षिक विवरण

पूजा के बारह फूल

डरे हुये को अभयदान दो, भूखे को अनाज का दान ।
प्यासे को जल दान करो, अपमानित का आदर सम्मान ।।
विद्या दान करो अनपढ को, विपदग्रस्त को आश्रय दान ।
वस्त्रहीन को वस्त्र दान दो, रोगी को औषध का दान ।।
धर्म रहित को धर्म सिखाओ, शोकातुर को धीरज दान ।
भूले को सन्मार्ग बता दो, गृहविहीन को गृह दान ।।
करो सभी निःस्वार्थ भाव से, मन मे कभी न हो अभिमान ।
अपने सम सबही को मानो, फिर किस का एहसान ।।
इन बारह पुष्पो से प्रभु का, करता जो अर्चन और ध्यान ।
हो निष्काम प्रेमयुत उसको, निश्चय मिलते हैं भगवान ।।

❀ ❀ ❀

जल से पतला कौन है, कौन भूमि से भारी ।
कौन अग्नि से तेज है कौन काजल मे काली ।।
जल से पतला ज्ञान है, पाप भूमि से भारी ।
क्रोध अग्नि से तेज है, कलक काजल मे काली ।।

सग्रहकर्ता
त्रिलोकचद कोचर

विश्वास स्वयं के गुण से महान् है। वह तो मानसिक शान्ति का महासागर है, अंतर वैभव का खजाना है, अक्षयानंद का भण्डार है क्योंकि सुख प्राप्त करने का या धन प्राप्त करने का और उज्जल से जीने का व्यवहार विश्वास से ही होता है।

विश्वास पर ही जीवन है

◇ आचार्य विजय हिरण्यप्रभसूरी

सामने वाले का विश्वास अपने पर सुखद छाया बन कर रहे उसके लिए सामने वाले का विश्वासु बनना चाहिए। अपना व्यवहार और बोलचाल गंगा की तरह, निर्मल पानी की तरह होने चाहिए।

सामने वाले का विश्वासु बनने के बाद समर्पण भाव से रहना चाहिए। कल्पना नहीं करनी चाहिए कि इसका नुकसान हो स्वप्न में भी ऐसी छोटी-मोटी तरंग भी उठनी नहीं चाहिए कि उसका मैं उपयोग कर जाऊं. विश्वास में जो रहे वो सब लूं"

पुष्पमां बनी ने सामा ना,
विश्वास ने सुवासित बनाव
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
पानी बनी ने सामा ना विश्वास ने
जन-जन मनघट मां छलकावी देव
चन्द्र बनी ने सामा ना विश्वास ने
ज्योत्स्ना नी शीतल लहरे ओलरावी देव

और मैं एक छोटा सा झरना बनकर सामने वाले के विश्वास के महासागर में मेरे विश्वास को समा दूं तब मैं सामने वाले के विश्वास को प्राप्त करने योग्य बनूं।

विश्वास स्वयं के गुण से महान् है। वह तो मानसिक शान्ति का महासागर है, अन्तर वैभव का खजाना है, अक्षयानंद का भण्डार है क्योंकि सुख प्राप्त करने का या धन प्राप्त करने का और उज्जल से जीने का व्यवहार विश्वास से ही होता है। इसलिए [illegible]

[illegible]

बिना जिन्दगी कभी भी सफल नहीं होती है और न ही फलती है। उसके बिना धीरज, हिम्मत और स्थिरता नहीं रहती है।

अपनी पत्नी पर पूरा-पूरा विश्वास हो तब ही पत्नी सुख मिल सकता है नहीं तो हवा खाते रहेंगे और घर-घर भटकते रहेंगे, और उबासियां लेते रहेंगे जिस प्रकार स्वप्नों की मिठाई से भूख मिटती नहीं है वैसे ही विश्वास की अवहेलना से इच्छा पूर्ण नहीं होती है।

विश्वासे रोटली भाखरी खवाय, छे
विश्वासे मारुती मा फराये, छे
विश्वासे ऐरोप्लेन मा यात्रा थाय, छे
विश्वासे लेवड देवड थाय, छे
आत्म विश्वासे ऐवरेस्ट सर थाय छे
विश्वासे लाखो, करोडो, अरबों ना
सौदा वेपार थाय छे
विश्वासे जिगर मा जहोजलालो
नुमजन थाय छे

विश्वास बगैर जगत या जिगर आकाश जैसा शून्य है। उसी प्रकार मन, वचन, और व्यवहार विश्वास के बिना बाँझ गाय की तरह है। पल-पल क्षण-क्षण बार-बार पानी के बिना चलता नहीं है वैसे ही विश्वास के बिना विश्व का तंत्र चलता नहीं है।

युवक अनिल के घर पर उनकी धर्म पत्नी अन्नपूर्णा ने स्वादिष्ट सुमधुर विविध तरह का भोजन बनाया है। स्नेह भरे नयन से, प्रेम भरे हृदय से, अपने श्रद्धेय आराध्य पतिदेव का इंतजार कर रही है।

अनेक शुभ कामनायें सोचती शुभ मगल भावनाओं को देखती हुई शुभ कामनायें करती है–अभी मेरे हृदय के द्वार आयेंगे, मेरे दिल के मन्दिर में प्रतिष्ठित आराध्य देव आयेंगे। मेरे प्राणों में अंकित प्राणेश्वर पधारेंगे उनके पैर धोकर पतिव्रता का पालन करूँगी, मेरे नारी धर्म को उज्ज्वल करूँगी और प्रेम के पुष्पों से भावनाओं से भरे हृदय से सत्कार करूँगी। विशिष्ट विशुद्ध हि-तकारी भावनाओं से मोती से स्वागत करूँगी।

इस प्रकार समय बिताते हुए घड़ी में बारह बज गये इससे वह पागल हो गई, घबरा गई, उसका मन अधीर हो उठा और सोचने लगी बारह बज गये अभी तक आये नहीं, क्यों नहीं आये ? क्या हुआ होगा ? रोज ग्यारह बजे आते अभी तक आते नहीं। रोते व्याकुल हो गई। फूल मुरझाते हैं उस प्रकार मुरझाने लगी–मेरे स्वामी को कुछ हुआ तो नहीं, होगा ना ऐसा विचार आते ही आंसू की धारायें बहने लगी। बार-बार खिड़की में झांकती है लेकिन पतिदेव के दर्शन होते नहीं इसलिए वह एक निराशा की आह भर कर चली जाती है और चिन्ता करने लगती है क्यों दिखते नहीं है ! उनका कोई समाचार क्यों नहीं आया ? क्या कोई कार्य में व्यस्त होंगे ? पता नहीं क्या अभी तक आये नहीं। अरे भगवान ! उनको क्या हुआ होगा, मुश्किल या किसी आफत में तो नहीं होंगे ?

हे प्रभु ! मेरे पति सकुशल घर आ जाये ऐसा करना, मेरे प्रिय को कुछ न होए ऐसा करना ! हे दयालु परमात्मा ? मेरे प्राण से भी ज्यादा प्यारे पतिदेव की सारसम्भाल करना, मेरे सौभाग्य को आंच न आये ऐसा कोई उपचार करना, मैं तेरी दासी हूँ, मेरी आशा पूरी करना। तू आशापूर्ण देवाधिदेव है, जहाँ हो वहाँ से जल्दी घर आये ऐसा करना

और उन्हें ऐसी ही बुद्धि सुझाना ! दासी की प्रार्थना स्वीकारना।

अपने पति के समय पर न आने पर जैसे बाज देख कर कबूतर धूजता है व पंख फैलाता है वैसे वह घबराने और धूजने लगी, चतुर चित्त में चिन्ता के चक्र उछलने लगे, दौड़ धूप करने लगे, विरहणी बनकर घर में चक्कर काटने लगी....पिंजरे में बन्द शेरनी चक्कर काटते हुए देखती है वैसे वह डरने लगी क्यों न आये....क्यों न आये....

और एक तरफ अनिल अपने मित्रों के साथ फाईव स्टार होटल में सुरा-सुन्दरी के नग्न नृत्य में मग्न था। धर्मपत्नी की चिन्ता की फाटल टांट पर चढा कर घर की फिक्र किये बिना बेफिक्र बने हुए जूठी प्लेटो में, अभक्ष्य, अपेय स्वादों में पागल बना हुआ है। घर की ऐसी-तैसी, घरवाली की भी ऐसी-तैसी जाये जहन्नुम में। मुझे क्या लेना-देना, यहां जो आनंद है वह घर तथा घरवाली के पास कहां।

देह प्रदर्शनकारी रंग-राग के रंगीन कल्पनाओं में भूल गये है....परनारी के शरीर की अपेक्षा पतिव्रता सती-धर्म, पत्नी का सुख देता है, यह विश्वास हृदय में से निकाल दिया है....अपनी धर्मपत्नी के शुद्ध हृदय से निर्मल बहते प्रेम के पुनीत झरनों को गंदी गटर मानकर उसमें डुबकी मारकर अपने द्वारा स्वदार संतोष व्रत का आनन्द ले सकता नहीं है और मान सकता नहीं है। क्योंकि [illegible], भोग आदि में लिपटा उसकी शरीर के रूप रंग को छूता तक [illegible] का प्रयत्न करके पूरा [illegible] पत्नी को [illegible] करके [illegible] करते है, और [illegible] रहा है, [illegible] के साथ पर चल रहा है, उसका उसे पता नहीं होता। इसलिए वह नटखट नखरे करने वाली चंचल गुप्त रोगों को छुपा कर अनेकों के साथ रोगी के निरोगी पुरुषों के साथ शारीरिक सम्बन्ध स्थापित करती है। ऐसी कलचर प्रेम करने वाली सुन्दरी के साथ सम्बन्ध स्थापित कर गंदी-गटर को पुनीत गंगा मानकर उसमें डुबकी मारकर क्षणिक आनन्द को आनन्द मानकर, गंदी गटर को गंगा मानकर गंदे पानी को निर्मल मानकर थोड़ा-थोड़ा पीने में सन्तोष मानते हैं और अविश्वास की जीवन गाड़ी चलाने की प्रवृति में प्रवृत्त होने वाला अनिल अपनी पत्नी के प्रेम पुष्प की परिमल का प्यार कैसे प्राप्त कर सकता है। अपनी शीलवती पत्नी को वहम और शंका की दृष्टि से देखता है....बात-बात पर डराते हैं, धमकाते हैं, हर समय हर पल धमकी देते हैं हर कार्य में नुक्स निकालते हैं। अपराधी के रूप में अपराध देखते हुए हाथ उठाने में चूकते नहीं है। फिर भी अन्नपूर्णा अपने पति को आराध्य देव मानकर जो कुछ सहन करना पड़े सहन करती है, एक शब्द भी बोले बिना पति का कार्य करती है और घर की इज्जत नारी से है, यह कहावत चरितार्थ करती है। उसमें जरा भी कमी नहीं रखती है।

अपने पति अनिल को नशे में घर में आते हुए देखा......अन्नपूर्णा हंसते मुंह से अपने स्वामी अनिल के सामने गई और भक्तिभाव पूर्वक अनिल के पांव धोये....हृदय के प्रेम भरे भाव से स्वागत किया, अभिवादन किया, [illegible] आ गये, अच्छा हुआ, कितनी [illegible] हुई, ऐसा कहते हुए आंसू बहाने लगी।

अनिल आते ही [illegible] देखकर अन्नपूर्णा

से बोला-ढोंग करना छोड दे, आँसू बहाने की आदत पड गई है, मैं कोई बर्फ नही हूँ जो तेरे आसुओ से पिघल जाऊँगा। तेरे को पाँव से नाखून तक पहचानता हूँ तेरे मे ज्यादा कई दीवालिया मैंने देखी है, तेरी चालाकी और समझदारी व ढोंग मेरे पास नही चलेगा, यहाँ तेरी दाल नही गलेगी।

फिर भी अन्नपूर्णा अपने पति की बातो पर ध्यान न देकर सती नारी की भाँति आदर्श व्यवहार अपना रही है, अपने विश्वास के बल पर अपने पति के सुख मे अपना सुख मानकर पति का भला चाहती है। अपनी शक्ति के अनुसार पति को सुखी रखना चाहती है, इससे पति के आँगन मे हित के अंकुर के बगीचे की कल्पना मे आनन्द मानती है।

मेघ देखकर मोर नाच उठते हैं, आम की मंजरी देख कर कोयल आनंदित होती है वैसे अन्नपूर्णा अपने पति को देखकर आनन्दित होती है। नाच उठती है, बेभान होकर गले लग जाती है। तब अनिल धक्का मारकर दूर कर देता है, फिर भी जरा भी दु:ख दर्द या पीडा अनुभव न करते हुए सती अंजना, सती सीता को याद करके सन्तोष मानती है। अपमान सम्मान एक मानकर वेदना के काटो को हृदय मे आने नही देती।

अन्नपूर्णा—स्वामी रसोई तैयार है, खाना खालो कृपा करो। अनिल—भूख नही है।

अन्नपूर्णा—भूख क्यो नही है? सुबह आपने क्या खाया था? नाश्ता और चाय पीकर गये हो, बारह से ज्यादा समय हो गया है, भूख क्यो न लगी? ऐसा नही हो सकता।

अनिल—बकवास मत कर, बोतल के ढक्कन सिर मत खपा, भड-भड करके सिर मत दुखा सिर दर्द की दवा?

अन्नपूर्णा—आपको अच्छा लगे वैसा बोलने की छूट है, जितनी छूट सती नारी को अपने पति की भक्ति करने की, इसलिए कहती हूँ कि भूख हो या न हो थोडा खालो।

अनिल—तुझे एक-बार कहा भूख नही है, क्यो खाने की जिद्द कर रही हो, क्या तू मुझे भिखारी समझती है?

अन्नपूर्णा—नही आप थोडा भी नही खायेगे तो मेरे गले कैसे उतरेगा? पति भूखा हो और पत्नी खाये, इसमे घर की क्या शोभा? उठो खाना खालो। आपको पसद है वैसी चीजे बनाई है।

अनलि—तू मुझे समझती है कि मै छोटा बालक हूँ। खाना देखकर उत्सुक हो जाऊँगा। मै कोई तेरा खिलौना हूँ जो कि तू चाबी भरे और मैं चलूँ। याद रखना मैं तेरी बातो मे आने वाला नही हूँ तुझे मेरी चिन्ता करने की कोई जरूरत नही है। अन्नपूर्णा—सती नारी को अपने पति की चिन्ता करने का जन्मसिद्ध अधिकार है। समझे, मैं आपकी धर्मपत्नी हूँ। तुम्हारे चरणो की दासी हूँ। आपको खिलौना समझ कर चलने वाली बाजारू नही हूँ। आपके चरणो की उपासक हूँ, उपासना करूगी मगर आपको मेरे दुखो की चाल मे फँसाने वाली शतरंज नही हूँ समझे आपको दु:ख हो, ऐसा कोई कार्य नही करूँगी क्योकि मैंने अपने दिल के देवालय मे आराध्य देव मानकर आपको प्रतिष्ठित किया है। यह भूलना मत, किसी के बहकाने मे आना मत, आपको भूख नही है यह मैं कैसे मान सकती हूँ। हृदय को

छुपाना महान् पाप है........हृदय को छुपाने से विश्वास उठ जाता है ।

भोली-भाली अन्नपूर्णा यह नहीं जानती कि अनिल बिलकुल बदल गया है, फाईव स्टार होटल के खाने का चाहक बन गया है । खुश आई सुन्दरियों के नशे में चकचूर बन गया है, तेरे शुद्ध प्रेम से विश्वास उठ गया है । पर स्त्री के सुख और संग के शिकारी का शिकार बना है, इसलिए तेरे प्रेम की और प्रीत की भूख नहीं है । उसको तो देह वासना की उद्भावना की असन्तोषकारी भूख है । तू तेरे पति को देवता मानती है । वह स्व दारा सन्तोषव्रत और सदाचार का दुश्मन बनकर शैतानगिरी करने वाला शैतान बना है ।

अनिल–एक बार कहा मुझे भूख नहीं है आया तब से बार–बार खा लो....खा लो.... की रट लगा कर दिमाग खराब कर रखा है....पति भक्ति की बन्दर की पूँछ बनकर झापट मार रही है और शान्ति से बैठने नहीं देती है, मुझे खाना हो तो खा ले । फालतू की दलील मत कर, मुझे खाना होगा तो मैं कभी भी कहीं भी खा लूंगा तेरी राह नहीं देखूंगा, तुझे पूछने भी नहीं आऊंगा ।

अन्नपूर्णा अपने पति की बात सुनकर आश्चर्यचकित होती है....मेरे स्वामी क्या बोल रहे है ? इनको क्या हुआ है ? पहले तो घर में रोज रसोई ही खाना मांगते थे और मेरी परोसी हुई थाली में विविध वानगियों की प्रशंसा करते थे और आनन्दित होते थे, रात होकर मुस्काते [illegible] और प्रेमभरी आंखों से निहारते थे, आज इन्हें क्या हो गया है, खाते नहीं है मेरे सामने देखते नहीं है....

अन्नपूर्णा–आपको क्या हो गया है, आज खाते नहीं है, आपको घर का खाना अच्छा नहीं लगता ऐसा क्यों है, भूख नहीं है, ये बहाना गलत है, क्या आपको अब मेरे हाथ की बनाई हुई रसोई अच्छी नही लगती ।

अनिल–तेरी रसोई में क्या दम है, क्या स्वाद है, प्रेम से बनाई हुई रसोई अच्छी लगती है, प्रेम बिना क्या रसोई, बिना नमक हो ऐसी लगती है । भूख हो तो भी खाने की इच्छा नहीं होती ।

अन्नपूर्णा–देखो तो सही आंख में पीलिया हो तो सब पीला–पीला ही दिखता है, वैसे ही घर की शुद्ध, साफ, ताजी और स्वादिष्ट रसोई में आपको दम नहीं लगता है, खारी अस्वादिष्ट लगती है...आपको घर की रसोई अच्छी नही लगती है तो बाहर की रसोई कैसे अच्छी लगती होगी ।

अनिल–कोई अपने खराब माल को भी खराब नही कहता वैसे ही कोई फूहड़ अपनी फूहड़ जैसी रसोई को अस्वादिष्ट नही कहता वैसे ही तू तेरी रसोई के बारे में समझ ले । यदि पराई रसोई अच्छी स्वादिष्ट हो तो खुश होकर दोनों हाथों से खायें क्यों न अच्छी लगे ।

"जहां विश्वास प्रेम हो वहां केवल बाजरे की रोटी भी घेवर से ज्यादा मीठी लगती है और जहां विश्वास नहीं हो वहां घेवर भी फीका लगता है, बिगड़ा हुआ और अस्वादिष्ट लगता है ।

अन्नपूर्णा–अतः आपका मेरे प्रति प्रेम नहीं विश्वास नहीं है, जिससे मेरी स्वादिष्ट रसोई भी अच्छी नहीं लगती है ।

अनिल–तुम्हारे रूप में सौंदर्य नहीं [illegible]

धनिये नही डाले होते, आज पति भक्ति परायणता का नाटक करके तू मुझे वश मे करना चाहती है लेकिन क्या तू मुझे बुद्धू समझती है।

अन्नपूर्णा – नहीं, आपको तो मैं मेरे आराध्यदेव प्रभु मानती हूँ, आप मुझे जो माने वह माने, आपको रोक नही सकती, मेरी सौगध खाकर बोलो या फिर आँख मे पीलिया हुआ है या फिर आपके हृदय मे किसी ने मेरे प्रति शका का बीज रोप दिया है।

मैंने मेरे सपने मे मेरी कल्पना मे भी आपका खराब या गलत सोचा नही है, न ही मेरे मन मे, न ही मेरे तन मे, न ही वदन मे कि आप दुखी हो आपको मानना हो तो मानो न मानना हो तो मत मानना, ये आपकी इच्छा की बात है।

दुध मा नाख्या हता बादाम पिस्तो
कस्तुरी केशर इलायची
शीरा मा नाख्या हता काजु चारोली दाख
श्रीखड मा नाख्या हता केशर, इलायची
आमरस मा नाख्या हता, घी शुद्ध
नमक सने खारोली

ये सब आपको छोटे–छोटे जीवजन्तु, कीडे लगते हो तो वह आपकी देखने की दृष्टि को धन्यवाद है।

आपकी बात सच है। जहाँ विश्वास और प्रेम है वहाँ केवल बाजरे की रोटी घेवर से ज्यादा मीठी है तुम्हे मेरे प्रति विश्वास और प्रेम नही रहा, इसलिए मेरी रसोई मे कीडे दिखते हैं दम बिना लगती है जैसी दृष्टि वैसी सृष्टि।

आपको आपकी घरवाली से विश्वास उठ गया है, इसलिए मैं लगती हूँ नागिन, प्रेम विहोगी दगाबाज, ढोग करने वाली ढोगी आपकी जूठी थाली मे जूठन खाने वाली ये तुम्हारी सगीनी जूठन जैसी लगती है तो आपको जहाँ सुख मिलता हो वहाँ जा सकते हो, कदम उठा सकते हो।

जहाँ आपको विश्वास मिलता हो या हुआ हो, वहाँ सुख से रहो, आपके सुख मे राजी हूँ मुझे मेरे आत्मविश्वास पर मेरे पतिव्रता धर्म पर सम्पूर्ण विश्वास है, मुझे आपके बिना रहना पडेगा उसका दुख है लेकिन आपके सुख की बात सुनकर सन्तोष कर लूँगी। आपके बिना अपने शील की रक्षा करूँगी।

"विश्वास छे त्या जीवन छे
विश्वास छे त्या सुख छे
विश्वास छे त्या भूख छे
विश्वास छे त्या प्रेम छे"

जहाँ प्रेम के नाम से देहवासना के पोषक तत्त्व हैं वहाँ स्वदार सन्तोष और सदाचार का अभाव है जहाँ देह व्यापार के प्रेम बाजार मे जाकर कोई सुखी हुआ नही है, तन से कमजोर हुआ है और धन से कमजोर हुआ है और खानदानी फूलदानी मे सुगधित फूलो की जगह कागज के फूल रखकर इज्जत की सुगन्ध मे वचित रहते हैं और जीवन बाग को उजाड बनाते हैं।

सज्जन के विश्वास पर चलने वाला कभी दुखी होता नही है, क्लेश–कलह पता नही है पच महाव्रतधारी साधु से विश्वास पर चलने वाला ज्ञानी होता है, राग–द्वेष से मुक्त होता है, परमात्मा का

सुख प्राप्त करता है, जन्म के चक्कर में बहना नहीं है।

विश्वास जीवन नु अमृत छे
विश्वास तनमन नो विसामो छे
विश्वास जीवन जीववानी आशा दोरी छे
विश्वास आत्मानी आराधना मा
आवश्यक अंग गण्यु छे
विश्वास भंग जीवन नु मृत्यु छे
विश्वास भंग आंखो ना ऊनां-ऊनां आंसू छे
विश्वास भंग अभिशाप ना
उजाड़ता नणस्या छे

विश्वास भंग अनेक आत्माओं की आंखों के जलते हुए लाल-लाल अंगारे है और अनन्त दुखों का गढ़ है, अनन्त पीड़ा दर्द का उबकारा है, अनेक वेदनाओं का सूचक है।

विश्वास नहीं रहा तो सुख शान्ति के रास्ते बन्द है। विश्वास न हो तो न घर के न घाट के रहे, बार-बार पद-पद पर ठोकर खानी, घर-घर, दर-दर भीख मांगकर घूमते हुए खाना..................खाली बैठे उबासी लेना, चने के छिलके उतारना, दुखड़े रोना, सुख के दिनों को खोना, हाय बाप रे हाय बाप रे करना, दीवार से सिर फोड़ना, स्वप्नों में सुख की कल्पना करना, आदि भूखे मरना, जिन्दगी को बेकार बनाना और नफड़े आदि करके अनेकों की लाते खाते रहना, घूरयि हुये कुत्ते की जिन्दगी जीना विश्वासघात जैसा कोई पाप नहीं है।

पैसे के लोभ में या पैसे की लालच में अपने स्वार्थ के पोपार्थ कोई का विश्वासघात कभी भी मत करना।

विश्वासघात से मिला वैभव, सुख-शान्ति समाधी देगा नहीं वरन् आधि व्याधि, आदि चिन्ताओं की आंधी में जीवन फुंक जायेगा, विनाश का तांडव होगा, और दुर्जन का नाश होगा, जैसे बोयेगा वैसा उगेगा, जैसा देंगे वैसा पाओगे।

□ □ □

स्वर्ग का साम्राज्य

स्वर्ग का साम्राज्य आपके भीतर ही है। पुस्तकों में, मन्दिरों में, तीर्थों में, पहाड़ों में, जंगलों में आनन्द की खोज करना व्यर्थ है। खोज करना हो तो उस स्वर्गीय आत्मानन्द का खजाना खोल देंगे जहां किसी [illegible] की खोज करो।

सम्यक्त्व और मिथ्यात्व

□ आचार्य श्रीमद्विजय इन्द्रदिन्न सूरीश्वर जी महाराज

हमारे शास्त्रकार भगवतो ने मनुष्य जन्म की अत्यन्त दुर्लभता बताई है। मनुष्य जन्म के बाद आर्य देश और आर्य देश के बाद जैन कुल मे जन्म मिलना उससे भी दुर्लभ है। जैन कुल मे जन्म भी ले लिया पर सुदेव, सुगुरु और सुधर्म का सयोग नही मिला, तत्त्व मे रुचि नही जगी तो जैन कुटुम्ब मे जन्म लेना भी व्यर्थ है। कई अभागे ऐसे जैन है जो समस्त धार्मिक सयोग मिलने पर भी आत्मा के उद्धार का कोई यत्न नही करते। उनके जैसा भाग्य-हीन मनुष्य और कौन होगा। इस तरह जैन धर्म की प्राप्ति के बाद समकित की प्राप्ति तो उससे भी दुर्लभ है।

समकित एक महामूल्यवान, अति दुर्लभ रत्न की तरह है। जो किसी-किसी महा-भाग्यशाली मनुष्य को ही प्राप्त होता है। जिसे यह समकित प्राप्त हो जाता है वह जीव अवश्य मोक्ष जाता है। वह जीव एक दिन वन्दनीय, पूजनीय और आदरणीय बन जाता है।

समकित धर्म का आधार है, इसके बिना मनुष्य की आध्यात्मिक उन्नति नही हो सकती। यह भी कहा जा सकता है कि यह धर्म का द्वार है। किसी किले मे प्रवेश करने के लिए उसके मुख्य द्वार से गुजरना आव-श्यक है। बिना इसके किले मे प्रवेश असभव है। वैसे ही धर्म रूपी किले मे प्रवेश करने के लिये समकित रूपी द्वार मे गुजरना पडता है। बिना इसके धर्म की आराधना असभव है। समकित के बिना धर्म की आराधना होगी तो वह सम्यक् फल नही देगी।

समकित का अर्थ

आध्यात्मिकता का भवन श्रद्धा या आस्था की बुनियाद पर टिका हुआ है। ससार के प्रत्येक धर्म और भगवान का अस्तित्व आस्था पर निर्भर है क्योकि आध्यात्मिक क्षेत्र मे अनुभूति का महत्त्व होता है और अनुभूति अगोचर होती है। इसलिये अगोचर को मानने के लिये श्रद्धा और आस्था का सहारा लेना ही पडता है। हृदय, मन और आत्मा मे बिना श्रद्धा को बसाये आध्यात्म मार्ग पर चलना कठिन है। जो बिना श्रद्धा और आस्था के धर्म का पालन करेगा, वह धर्म को स्वार्थपूर्ति का साधन बनाएगा। नि स्वार्थ भाव देवत्व पर अविचल आस्था धार्मिकता का पहला चरण है।

धर्म मे बसने वाली इस अविचल, अटूट और अनन्य आस्था को जैन धर्म मे समकित कहा जाता है। इसका दूसरा नाम सम्यक्त्व

या सम्यग्दर्शन भी है। समकित जैन धर्म का पारिभाषिक शब्द है और यह शब्द एक तरह से जैन धर्म में प्रवेश करने का द्वार है। बिना समकित को धारण किए कोई जिन का अनुरागी जैन नहीं हो सकता।

श्रद्धा की शुद्धता और गहराई को पा लेने पर समकित का जन्म होता है। धर्म, गुरु या धार्मिक ग्रन्थ पर श्रद्धा कर लेना और उसे पूजने लगना श्रद्धा का छोटा और सीमित रूप है। यही श्रद्धा दृढ़ता में बदल जाती है तब समकित कहलाती है।

तत्त्वार्थ सूत्र में समकित की परिभाषा इस तरह दी है—

'तत्वार्थ श्रद्धाणा सम्यग्दर्शनं' तत्त्व और अर्थ पर श्रद्धा होना ही सम्यक् दर्शन है। कलिकाल सर्वज्ञ हेमचन्द्राचार्य ने 'योग शास्त्र' में समकित की स्वरूप-व्याख्या करते हुए लिखा है—

या देवे देवता बुद्धिर्गुरौ च गुरुतामतिः।
धर्मे च धर्मधीः साशुद्धा, सम्यक्त्वमिदमुच्यते।

जो देव है उन्हें देवत्वबुद्धि से ग्रहण करना, जो गुरु है उन्हें गुरु भाव से स्वीकार करना और जो विशुद्ध धर्म है उसे धर्म रूप में धारण करना सम्यक्त्व है। जो जिस रूप में विद्यमान है उसे उसी स्वरूप में ग्रहण करना है। यथास्थित है उसे उसी के वास्तविक रूप में स्वीकार करना चाहिए। जैसे अरिहंत देव है उन्हें अरिहन्त भाव से अरिहन्त ही मानना चाहिए और मान कर उनकी अरिहन्त स्वरूप में उपासना करनी चाहिए। जो निर्ग्रन्थ रूप में गुरु हैं उन्हें [illegible] [illegible] गुरु स्वीकार कर भक्ति करनी चाहिये और जो सर्वज्ञ जिन कथित जैन धर्म है वही सच्चा और वास्तविक धर्म है, मान कर उसका पालन करना चाहिए। इस तरह सुदेव, सुगुरु और सुधर्म में अविचल आस्था और समर्पण भाव का नाम सम्यक्त्व है।

सम्यक्त्व और मिथ्यात्व :

समकित का अर्थ समझने के साथ-साथ मिथ्यात्व का स्वरूप समझ लेना भी आवश्यक है। समकित का विरोधी शब्द मिथ्यात्व है। मिथ्यात्व में रुचि होने पर समकित का उदय नहीं हो पाता। जो सत्य नहीं है वह मिथ्या है और मिथ्या का भाव मिथ्यात्व है। समकित उन्नति है तो मिथ्यात्व अवनति। समकित प्रकाश है तो मिथ्यात्व अंधकार। समकित जीवन है तो मिथ्यात्व मृत्यु। समकित आराधना है तो मिथ्यात्व विराधना। समकित मुक्ति है तो मिथ्यात्व बन्धन।

मिथ्यात्व एक अवरोध है समकित के लिये। आत्मा की अवनति का कारण यही मिथ्यात्व है। आत्मा तो शुद्ध, चैतन्य, अनन्त ज्ञान युक्त, प्रखर प्रतापी सूर्य की तरह है। मिथ्यात्व आत्मा के शुद्ध रूप को आच्छादित, अशुद्ध और मलिन करता है। जबकि सम्यक्त्व का कार्य आत्मा के उसके वास्तविक रूप को प्रकट करना है। जैसे बादल सूर्य के प्रकाश को ढक देता है वैसे ही मिथ्यात्व आत्मा के ज्ञान को ढक देता है। सम्यक्त्व का [illegible] है और मिथ्यात्व का [illegible] अज्ञान। [illegible]

मिथ्यात्व का अर्थ

निम्सक पावयण ज जिर्णेहि पवेइय ।
त तहामेव सच्च ए समठे सेमे अणठे ।।

जो जिनेश्वर ने कहा है वह निश्चित रूप से सत्य है। "इस प्रकार का दृढ विश्वास सम्यक् दर्शन कहलाता है। इसके विपरीत जो मानता है वह मिथ्यात्व है अर्थात् जिनेश्वर भगवान् ने जो कहा है उसे असत्य मानता है। जिनेश्वर कथित धम पर श्रद्धा नही रखता, निर्ग्रन्थ सुगुरु को गुरु नही मानता, वही मिथ्यात्वी है। तत्त्व के प्रति अरुचि, तत्त्व और अर्थ मे अश्रद्धा ही मिथ्यात्व है। इस मिथ्यात्व के कुछ भेद है जिनका वर्णन फिर कभी किया जाएगा।

"धर्म"

□ सुरेश मेहता

1 धर्म उत्कृष्ट मगल है।
2 धर्म स्वर्ग एव मोक्ष दिलवाने वाला है।
3 धर्म ससार रूपी वन को उल्लघन करने मे मार्गदर्शक है।
4 धर्म माता की तरह पोषण करता है।
5 धर्म पिता की तरह रक्षा करता है।
6 धर्म मित्र की तरह प्रसन्न करता है।
7 धर्म बन्धन की तरह स्नेह रखता है।
8 धर्म स्वामी की तरह उत्कृष्ट प्रतिष्ठा को प्राप्त करवाता है।
9 धर्म गुरु जैसे उज्ज्वल गुणो से युक्त उच्च पद पर आरूढ करवाता है।
10 धम सुख का महा महल है।
11 धम शत्रुरूप सकट मे बचाने वाला है।
12 धर्म के शीत मे उत्पन्न हुई जडता के दने की क्षमता रखता है।
13 धर्म पाप के मर्म को जानने वाला है।
14 धर्म से जीव राजा बनता है।
15 धर्म से जीव बलदेव बनता है।
16 धर्म से जीव वासुदेव बनता है।
17 धर्म से जीव चक्रवर्ती बनता है।
18 धर्म मे जीव इन्द्र बनता है।
19 धर्म से जीव ग्रेवेयक और अनुतर विमान मे अहमिन्द्र मे देव पद को प्राप्त होता है।
20 धम से जीव तीर्थंकर पद को प्राप्त होता है।

दुःख से मत घबराओ

आचार्यश्री विजयवल्लभ सूरीजी म.

फूलों की खोज में निकला आदमी शूलों को देखकर घबरा जाता है. उनकी चुभन से चीख उठता है। परन्तु मैं उनसे कहना चाहता हूँ कि फूल तो इन्ही में छिपे पड़े है। शूलों से घबराए तो फूलों को न पा सकोगे।

हीरों की खोज में निकला आदमी कोयलों की कालिख देखकर यदि हाथ लगाने से रुक जाता है तो मैं उससे कहना चाहता हूँ कि हीरा तो इन्ही कोयलो मे छिपा हुआ है। कोयलों की कालिख देखकर भागे तो हीरो को न पा सकोगे।

पानी की खोज में पृथ्वी को खोदता हुआ आदमी पत्थरो को देखकर खोदना छोड देता है, निराश हो जाता है, परन्तु मैं उससे कहना चाहता हूँ कि पत्थरो को देखकर खोदना मत छोडो। इन्ही पत्थरो के नीचे शीतल जल का स्रोत छिपा पड़ा है। पत्थरो को देखकर खोदना छोड़ा तो जल न पा सकोगे।
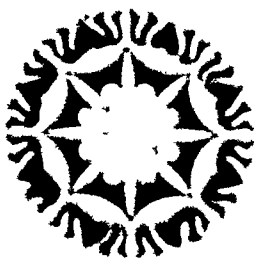
इसी प्रकार सुख की खोज में निकला आदमी दुःखों को देखकर घबरा जाता है, परन्तु मैं उनसे कहना चाहता हूँ कि दुःख को देखकर घबरा मत, भाग मत, क्योंकि इन इन्हीं दुःखों में ही सुख छिपा पड़ा है। दुःखों को देखकर भाग गये तो सुख को न पा सकोगे।

आज सवत्सरी महापर्व हैं। क्षमापना द्वारा इस महापर्व की आराधना करने की है।

जो व्यक्ति क्षमा की याचना करता है और क्षमा प्रदान करता है, वह महान् है। जो क्षमा याचना नही करता है, वह हीन है।

पर्वाधिराज का महाप्राण क्षमापना

लेखक—मुनि श्री रत्नसेन विजय जी म

पर्वाधिराज पर्युषण का आज अतिम दिन है। आज के दिन का बहुत ही महत्त्व है। आज सवत्सरी महापर्व है। क्षमापना द्वारा इस महापर्व की आराधना करने की है।

आज प्रात काल मे ही हर जैन के हृदय मे आनन्द उल्लास छाया हुआ है। काफी आराधक आज पौषध के साथ उपवास तप की आराधना करते है। नन्हे-नन्हे बालक भी आज उपवास आदि तप करते हैं।

आज के दिन शुभ श्रुतज्ञान की भक्तिपूर्वक पूजा कर गुरु महाराज को बारसा सूत्र वोहराते है। फिर गुरु भगवत सकल सघ को बारसा सूत्र सुनाते है।

बारसा सूत्र कल्पसूत्र ही है। कल्पसूत्र की कुल 1200 गाथा होने से इसे बारसासूत्र कहा जाता है।

कल्पसूत्र के व्याख्यान बराबर न सुनें हो वे लोग बारसासूत्र के श्रवण द्वारा कल्पसूत्र के श्रवण का लाभ प्राप्त कर सकते है इसीलिए बारसासूत्र सुनाया जाता है।

बारसासूत्र के अत मे कहा है —

"जो उवसमइ तस्स अत्थि आराहणा,
जो न उवसमइ तस्स नत्थि आराहणा,
तुम्हा अप्पणा चेव उवसमियव्व,
से किमाहु भते? उवसमसार खु समाण्ण'

जो उपशात बनता है, उसे आराधना का फल मिलता है। जो उपशात नही बनता है, उसे आराधना का फल नहीं मिलता, क्योकि उपशम ही सच्चा श्रमणत्व है।

सक्षिप्त शब्दो मे बहुत ही महत्त्वपूर्ण बात कह दी गई है।

आज सध्या के समय "सावत्सरिक प्रतिक्रमण" करना होगा। इस प्रतिक्रमण द्वारा वर्ष के दौरान की गई भूलो की क्षमापना करनी है।

जो व्यक्ति क्षमा की याचना करता है और क्षमा प्रदान करता है, वह महान् है और जो क्षमा याचना नही करता है, वह हीन है।

यह क्षमापना हृदय पूर्वक होनी चाहिये, औपचारिक नहीं। वर्तमान युग में औपचारिकता बहुत बढ़ गई है।

यदि दिल में से दुश्मनी का जहर कम न हो तो वह क्षमापना, क्षमापना नहीं है।

किसी को क्षमा प्रदान करने के बाद उसकी गल्तियों को पुनः याद नहीं करना है। क्षमा का व्यवहार करने के पश्चात् भी यदि किसी अपराध को याद कर हम उसे टोकते रहें तो ऐसी क्षमापना का कोई अर्थ नहीं है।

शास्त्रों में इसी संदर्भ में एक कुम्हार और एक बालमुनि का दृष्टांत आता है।

एक कुम्हार के घर के पास कुछ मुनि रुके हुए थे। उनमें से एक बाल मुनि थे। अपनी कुतूहलवृत्ति को पूर्ण करने हेतु वे कंकर मारकर एक घड़ा फोड़ते हैं। कुम्हार ने कहा कि "यदि आप इस तरह घड़े फोड़ेंगे तो मुझे काफी नुकसान होगा। कृपया ऐसा मत कीजिए।"

बाल मुनि ने कहा : मिच्छामि दुक्कडं"। यह सुनकर कुम्हार शान्त हो गया। कुम्हार के जाते ही बाल मुनि ने कंकर मार कर एक घड़ा और फोड़ दिया। कुम्हार ने बाल मुनि को फिर समझाया। पुनः उन्होंने "मिच्छामि दुक्कडं" मांग लिया। लेकिन पुनः दूसरा घड़ा फोड़ दिया।

कुम्हार ने सोचा कि "मिच्छामि दुक्कडं" के नाम पर बाल मुनि मेरा मजाक कर रहे हैं।

कुम्हार ने एक कंकर बाल मुनि के कान में रखकर उसे अंगुली से दबाया। बाल मुनि बोल उठे। कुम्हार ने कहा : "मिच्छामि दुक्कडं" वह फिर कान दबाने लगा और फौरन "मिच्छामि दुक्कडं" मांग लेता। इस तरह वह भी बार-बार करने लगा।

जरा सोचिये। क्या इस तरह के "मिच्छामि दुक्कडं" का कोई अर्थ है?

जबान से तो "मिच्छामि दुक्कडं" बोल दें पर दिल में से वैरभाव को दूर न करें, वैरवृत्ति ज्यों की त्यों रहे तो ऐसी क्षमापना से वास्तविक हृदय शुद्धि नहीं होती।

स्मरण कीजिये उन कुरगडु महामुनि को। क्षुधावेदनीय कर्म के तीव्र उदय के कारण संवत्सरी के दिन भी वे उपवास नहीं कर सके और वहोरने जाते हैं।

कुरगडु मुनि चावल का आहार लेकर उपाश्रय में आये। कुरगडु मुनि ने अपने बड़ील मुनियों को गोचरी बताई। परन्तु तप के अभिमान से उन मुनियों ने आवेश में आकर कुरगडु मुनि से कहा : "अरे! आज संवत्सरी के दिन भी खाते हुए तुझे शर्म नहीं आती? तुझे पता नहीं कि मुझे आज उपवास है।" ज्येष्ठ मुनियों ने कुरगडु मुनि का तिरस्कार किया। इतना ही नहीं, उनके पात्र में थूक दिया।

कुरगडु मुनि विचार में पड़ गये और सोचने लगे…अहो! धन्य है इन तपस्वी मुनियों को, जो मास-क्षमण आदि उग्र तपश्चर्या कर रहे हैं, मैं तो एक अभागा हूं। आज के पवित्र दिन भी तप नहीं कर सका। इन तपस्वियों ने मेरे पात्र में थूककर मुझ पर अनुग्रह किया है, अब मेरे मन के [illegible] अवश्य दूर होंगे।

[illegible]

ही नही, उनकी तपस्या का अनुमोदना भी की।

बस ! तप की इस तीव्र अनुमोदना के प्रभाव से, पाप के पश्चात्ताप और क्षमागुण के योग से उन्हे तुरन्त ही केवल ज्ञान प्राप्त हो गया।

क्षमापना का प्रभाव तो देखिये ! कूरगडु मुनि केवली बन गये।

शासन देवी ने उपाश्रय मे प्रवेश किया। तपस्वी मुनि खुश हो उठे। हमारे तप का इतना प्रभाव ? स्वय शासन देवी प्रगट हो गई। किन्तु देवी तो कुरगडु मुनि की ओर आगे बढी। तपस्वी मुनि आश्चर्य मे डूब गये। वे तुरन्त बोल पडे, "देवी ! तप तो हमने किया है।"

देवी बोली सबूर ! केवल ज्ञानी की आशातना मत करो।"

सारे मुनि अपने स्थान से उठ खडे हुए "क्या कहा ? केवल ज्ञानी ? क्या कूरगडु मुनि को केवल ज्ञान प्रगट हुआ है।"

तुरन्त ही वे कूरगडु मुनि के पास गये और पश्चात्ताप करने लगे।

"अहो ! हमारी कैसी अज्ञानता है ! हमने केवलज्ञानी की आशातना की। धिक्कार हो हमे।"

इस तरह पश्चात्ताप के भाव मे डूबकर, कूरगडु मुनि के चरणो मे गिरकर क्षमापना मागते-मागते उन तीनो मुनियो को भी केवलज्ञान प्राप्त हो गया।

अहकार के विलीनीकरण के साथ ही केवलज्ञान की प्राप्ति हुई।

अद्भूत चमत्कार है क्षमा धर्म मे ! क्षमाशील आत्मा ही धर्म को प्राप्त कर सकता है, धर्म की अराधना कर सकता है और धर्म की पूर्णता प्राप्त कर सकता है।

अहकारी मनुष्य क्षमा नही माग सकता। अहकार एक स्पीड ब्रेकर है, जो विकास की गति को रोक देता है।

आज के पवित्र दिन हृदय मे से वैरभाव को सर्वथा दूरकर सावत्सरिक प्रतिक्रमण करे। हृदय मे सब जीवो के प्रति मैत्री भाव धारण करें।

पर्वाधिराज पर्युषण पर्व के सदेश —

"वैर का विसर्जन और सब जीवो मे मित्रता" को जीवन मे आत्मसात कर आत्म-कल्याण के पथ पर आगे बढते रहो। यही एक शुभाभिलाषा है।

JAIN

SURESH MEHTA

J — JUST
A — AFFECTIONATE
I — INTROSECTIVE
N — NOBLE

डर नही होता। जीवन से निरासक्त हो जाना मृत्यु के भय को जीत लेना है। जीजीविषा जितनी कम होगी मृत्यु का डर उतना ही कम सताएगा।

प्रत्येक प्राणी का इस दुर्वार जीजीविषा की रक्षा करना ही परम धर्म है। जैन धर्म ने सच्चे धर्म का उत्स जीव रक्षा मे खोजा इस ससार मे जिसने भी जन्म लिया है, चाहे वह छोटे से छोटा जीव ही क्यो न हो, उसे भी जीने का उतना ही अधिकार है जितना हमे और तुम्हे है। जैन धर्म का यह शाश्वत घोष है। माहणो-माहणो-माहणो। किसी भी जीव को मत मारो मत मारो मत मारो, जैन साहित्य मे एक शब्द प्रयोग हुआ है। वह है—अमारी प्रवर्तन। कोई राजा अपने राज्य मे यह घोषणा करवा दे अब मेरे राज्य मे कोई भी व्यक्ति शिकार नही खेलेगा, कोई भी व्यक्ति किसी की भी किसी के लिए भी हत्या नही करेगा। इस प्रकार की उद्घोषणा को अमारी प्रवर्तन कहा जाता है। इसे आज की भाषा मे 'हिंसा निषेधाज्ञा' कह सकते है। महाराजा सम्प्रति एव महाराजा कुमारपाल ने यह अमारी प्रवर्तन अपने राज्य मे किया था। उसी प्रकार आचार्य हीरसूरिजी के प्रभाव मे आकर जलालुद्दीन मोहम्मद अकबर ने भी अमारी प्रवर्तन बजवाई थी।

सबसे बडा दान है अभयदान। अभयदान अर्थात् जीवन के प्रति आश्वस्त करना। किसी जीव को यदि आप मौत से निर्भय बना देते है, उसे जीवन का दान दे देते हैं तो यह सबसे बडा दान है और आप सबसे बडे दानेश्वर। जैन धर्म के अनुसार धर्म का प्रारम्भ करुणा और दया से होता है। जिसके हृदय मे करुणा और दया होगी वही प्राणी मात्र की रक्षा कर सकता है, वही अहिंसक हो सकता है। धर्म का निवास कोमलता और ऋजुता मे है, कठोरता और क्रूरता मे नही।

हम यदि किसी को जीवन दे नही सकते तो लेने का क्या अधिकार है? किसी का जीवन छीनकर उसे मौत के घाट उतार देना अधर्म है। हममे जितनी दुर्वार जीजीविषा है उससे भी बढकर दूसरे मे भी जीजीविषा है। हम हर प्रकार से अपने जीवन की सुरक्षा चाहते है वैसे ही दूसरे भी चाहते है। एक जीव दूसरे के जीवन के मूल्य को समझे। एक दूसरे की सवेदना का अनुभव करे तो ससार मे निर्भयता का साम्राज्य छा सकता है और जहाँ निर्भयता है, वही प्रत्येक प्राणी अपनी दुर्वार जीजीविषा की रक्षा कर सकता है।

□ □

जैसे मछलियाँ जलनिधि मे रहती है, पक्षी वायुमडल मे ही रहते हैं, वैसे आप भी ज्ञानरूपी प्रकाशपुज मे ही रहो, प्रकाश मे चलो, प्रकाश मे विचरो, प्रकाश मे ही अपना अस्तित्व रखो। फिर देखो, खाने-पीने का मजा, घूमने-टहलने का मजा, जीने-मरने का मजा।
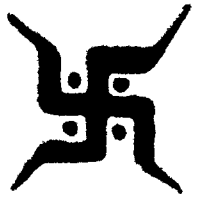
निर्युक्तिकार १४ पूर्वधर पूज्य आचार्य श्री भद्रबाहुस्वामी महाराज

□ मुनि भुवनसुन्दर विजयजी म.
जैन मन्दिर, सदर बाजार, जालना (महाराष्ट्र)

चरम तीर्थंकर भगवान श्री महावीर स्वामी की पाट परम्परा में प्रथम पट्टधर पू. श्री सुधर्मास्वामी हुए। भगवान श्री महावीर स्वामी के ११ गणधर में से ९ गणधर भगवान के निर्वाणलाभ के पूर्व में ही निर्वाण हो चुके थे जबकि भगवान के निर्वाण के बाद तुरन्त ही गौतम स्वामी महाराज को केवल ज्ञान हो गया था। जैन शासन का एक नियम यह है कि तीर्थंकर भगवान की अनुपस्थिति में चतुर्विध संघ का संचालन छद्मस्थ आचार्य ही करते हैं। केवलज्ञानी चतुर्विध संघ का संचालन-पालन नहीं करते हैं, क्योंकि वे सर्वथा राग और द्वेष से रहित वीतराग सर्वज्ञ बन गये। वे अब साधु-साध्वी आदि की सारणा-वारणा नहीं कर सकते हैं, क्योंकि उनमें अब सारणा-वारणा (भूल होने से पूर्व याद दिलाना, भूल करने पर वारण करना इत्यादि) करने योग्य प्रशस्त राग भी नहीं है।

पू. श्री सुधर्मास्वामी की पाट परम्परा में दूसरे आते पू. आर्य श्री जम्बूस्वामी। तीसरे पू. आर्य प्रभव स्वामी, चौथे पू. आचार्य श्री शय्यंभवसूरि, पांचवें पू. आचार्य श्री यशोभद्रसूरिजी आये, आपकी पाट परम्परा में पू. आ. श्री संभूतिविजयसूरिजी छट्ठे पट्टधर बने, और आपकी पाट परम्परा में सातवें पट्टधर पू. आ. श्री भद्रबाहुस्वामी महाराज आये। ये सभी पट्ट प्रभावक १४ पूर्वधर ज्ञानी तपस्वी थे।

छट्ठे पट्टधर संभूतिविजयसूरिजी हुए, आपकी पाट परम्परा में [illegible] सातवें [illegible]

[illegible]

सूरिजी और दूसरे आ श्री भद्रबाहुस्वामी । छट्ठे पट्टप्रभावक आ श्री सभूतिसूरिजी म के युगप्रधान आचार्य के ८ वर्ष मे ही स्वर्गगमन हो जाने के बाद, उनके शिष्य श्री स्थुलिभद्र स्वामी पट्टप्रभावक होते थे, किन्तु वे अभी इस समय शास्त्रनिष्णात नही बने थे, जिससे आ श्री सभूतिसूरिजी के बाद आपके छोटे गुरुबन्धु और आ श्री यशोभद्रसूरिजी के दूसरे शिष्य आ भद्रबाहुस्वामी सातवे पट्टप्रभावक हुए और आठवे पट्टप्रभावक के रूप मे कामविजेता आ स्थूलिभद्रसूरिजी हुए ।

पू आ श्री भद्रबाहुस्वामी महाराज का जन्म वीर निर्वाण सवत् ९४ मे हुआ था। आप 'प्राचीन' गोत्रीय ब्राह्मण थे और ४४ वर्ष की अवस्था मे आचार्य यशोभद्र स्वामी के उपदेश से प्रतिबोध पाकर अपने छोटे भाई वराहमिहिर के साथ भागवती दीक्षा को स्वीकार किया ।

卐 ७वें पट्टधर शासनप्रभावक आचार्य श्री की यशोगाथा 卐

पू आ श्री यशोभद्रसूरिजी के दूसरे पट्टधर और भगवान महावीर स्वामी की पाट परपरा मे सातवें शासन प्रभावक आचार्य भद्रबाहुस्वामी महाराज हुए है । आप अतिम १४ पूर्वधर यानी श्रुतकेवली हुए ।

पू आ श्री भद्रबाहुस्वामी महाराज घोर तपस्वी, महान् धर्मोपदेशक, सकल श्रुतशास्त्र के पारदेश्वा और उद्भट विद्वान् होने के साथ-साथ महान् सिद्धयोगी पुरुष थे । आपने निरन्तर १२ वर्ष तक महाप्राण ध्यान के रूप मे उत्कट योग की साधना की थी। आपने निरन्तर विभिन्न क्षेत्रो मे उग्रत विहार के द्वारा वीर निर्वाण सवत् १५६ से १७० तक के १४ वर्ष के आचार्य काल मे जैन शासन का उद्योत किया था ।

(१) आप अतिम श्रुतकेवली थे, ऐसा उल्लेख दिगम्बर परपरा के शास्त्र मे भी मिलता है । श्री जगपण्णति शास्त्र मे लिखा है कि—

*** सिरि गोयमेण दिण्ण, सुहम्मणाहस्स तेण जबुस्स ।
विण्हु णदीमित्तो तत्तो य पराजिदो य ततो ॥४३॥
गोवद्धणो य तत्तो भद्दभुओ अत केवली कहिओ ॥४४॥***

अर्थ —श्री गौतमस्वामी ने अपना पद सुधर्म स्वामी को दिया, उनके बाद क्रमश जम्बुस्वामी, विष्णु, नदीमित्र, अपराजित और गोवर्धन को दिया गया । उनके बाद भद्रभूत अतिम केवलि कहे ह ।

(२) आपके विषय मे आ श्री मलयसूरिजी म ने पिडनिर्युक्ति की टीका मे लिखा है कि—

***अपश्चिम पूर्वभृता द्वितीय , श्री भद्रबाहुश्च गुरु शिवाय ।
कृत्वोपसर्गादिहरस्तव यो, ररक्ष सघ धरणार्चिताह्वि ॥१३॥
निर्व्यूढ सिद्धान्तपयोधिराय, स्वयंभ्व वीरात् खनगेन्दुवर्षे ॥***

अर्थ —आचार्य यशोभद्र सूरिजी के दूसरे पट्टधर, अतिम १४ पूर्वधारक, उवसग्गहर नाम के स्तोत्र की रचना द्वारा सघ की रक्षा करने वाले, जिनके चरणो की

सेवा धरणेन्द्र करता था ऐसे, सिद्धान्त सागर को धारण करने वाले और वीर संवत् १७० में देव हुए हैं ऐसे श्री भद्रबाहु गुरु आपके कल्याण के लिए हो।

जीवन परिचय

तित्थोगालिय पयन्ना, आवश्यक चूर्णि, आवश्यक हारिभद्रीया टीका और परिशिष्टपर्व आदि प्रामाणिक प्राचीन ग्रन्थों में १४ पूर्वधर, निर्युक्तिकार, श्रुतकेवली श्री भद्रबाहुस्वामी महाराज का जीवन परिचय उपलब्ध होता है। जो इस प्रकार है:—

इन महान् आ. श्री भद्रबाहु स्वामी म. का जन्म महाराष्ट्र प्रदेश के प्रतिष्ठापुर में हुआ था। ये जन्म से प्राचीन नामक गोत्र के ब्राह्मण थे। श्री भद्रबाहुस्वामी और वराहमिहिर दोनों सगे भाई थे। दोनों भाइयों ने आ. श्री यशोभद्रसूरिजी के उपदेश से वैरागी होकर उनके पास जैन चारित्र-दीक्षा को स्वीकार किया था। उस समय श्री भद्रबाहुस्वामी ४८ वर्ष के थे। वे दोनों भाई संस्कृत भाषा के प्रखर विद्वान् थे और ज्योतिष विद्या के पारगामी थे। दोनों भाई विद्या के उपासक थे।

जैन चारित्र-दीक्षा अंगीकार करने के बाद दोनों भाइयों ने अल्पकाल में ही शास्त्राभ्यास और जैनविधिविधान में अति कुशलता प्राप्त की। किन्तु दोनों भाइयों में श्री भद्रबाहुस्वामी ने बहुत विनयी, गंभीर और दृढ़ निश्चयी थे। आप शास्त्रीय ज्ञान के अगाध सागर बने जबकि वराहमिहिर मुनि अविनयी और उच्छृंखल थे, श्री भद्रबाहु स्वामी विद्वत्ता और विनय से गुरु के चरणों की उपासना और आज्ञाकारिता से, सूत्र और अर्थ ग्रहण पूर्वक १४ पूर्व के पारंगत बने। गुरुदेव आ. श्री यशोभद्रसूरिजी ने अपने सुयोग्य शिष्य श्री भद्रबाहु स्वामी को जैनशासनधुरा के वाहक आचार्य पद से अलंकृत किया। इस के साथ ही आ. श्री यशोभद्रसूरिजी ने अपने सुयोग्य शिष्य आचार्य श्री भद्रबाहुस्वामी को कहा था कि—'वराहमिहिर मुनि आचार्य जैसे गरीम और गरिम-गर्भीर पद के योग्य नहीं है, उसमें इस महान पद की जिम्मेदारी उठाने की ताकत भी नहीं है, इसलिए उसे आचार्य पद नहीं देना।'

यद्यपि वराहमिहिर मुनि चन्द्रप्रज्ञप्ति, सूर्यप्रज्ञप्ति आदि कुछ ज्योतिष सम्बन्धित ग्रंथों का अध्ययन कर अहंकार से अभिभूत हो आचार्य पद प्राप्ति के लिए इच्छुक और उत्सुक था किन्तु आ. यशोभद्रसूरिजी म. ने उसे अयोग्य समझा था। क्योंकि आचार्य पद की गरिमा के द्योतक पद शास्त्रों में लिखा है। यथा

(१) *** बहो गणधर सद्दो, गोयममाईहिं धीरपुरिसेहिं।
जो तं ठवइ अपत्ते, जाणंतो सो महापावो॥

अर्थ:—गणधर (आचार्य) जैसे तीर्थंकरतुल्य पद को गौतम स्वामी आदि धीर पुरुषों ने ग्रहण किया है। ऐसे तीर्थंकरतुल्य पद पर यदि कोई जानबूझ कर किसी अपात्र को स्थापित करता है तो वह व्यक्ति महापाप का भागी होता है।

इस आप्त वचन को ध्यान मे रखकर और गुर्वाज्ञा को स्वीकार कर पू भद्रबाहु-सूरि ने वराहमिहिर मुनि को गणधर (आचार्य) पद प्रदान नही किया।

वराहमिहिर मुनि मुनिवेष मे १२ वर्ष रहा था। किन्तु जब उसने देखा कि—"अब मुझे आचार्य पद मिलने वाला नही है" तो वह गुस्से मे आ गया और साधु वेष का त्याग कर गृहस्थ जीवन मे चला गया। प्रतिष्ठानपुर के राजा जितशत्रु को अपनी विद्या-कला की चतुराई से आवर्जित कर वह राजा का पुरोहित बन गया। वैसे साधु अवस्था मे ही वराहमिहिर ज्योतिष विद्या का अभ्यासी था, इसलिए इस विद्या से वह राजा और प्रजा को आवर्जित-आकर्षित कर सकता था। राजा और प्रजा मे उसकी कीर्ति बढे, इसलिए वह अनेक विध प्रयत्न करता रहता था। राजा को खुश करके वह राज्यमान्य भी बन गया था किन्तु आचार्य पद नही मिलने से मन मे द्वेष धारण करता हुआ वह जैन शासन की निंदा करता रहता था।

अपने निमित्तज्ञान के बल पर एक बार वराहमिहिर ने राजा को कहा—'हे राजन्! चौमासे मे बारिश की वृष्टि होगी, जिसमे बावन पल का एक मछला आकाश मे एक निश्चित स्थान पर गिरेगा।' उसने उस स्थान पर गोलाकार निशान लगाया कि इस स्थान के मध्य मे मछला गिरेगा। किन्तु भद्रबाहु स्वामी महाराज ने राजा को बताया कि मछला साढे एक्यावन पल का गिरेगा और वराहमिहिर प्रदर्शित स्थान के किनारे पर गिरेगा। ऐसा ही हुआ। तब जैन शासन का जयजयकार हुआ। आचार्य श्री भद्रबाहुस्वामी की कीर्ति और यश बढा जबकि वराहमिहिर का लोगो ने अवर्णवाद किया लोग वराहमिहिर की निंदा करने लगे।

दूसरी बार प्रसग ऐसा बना कि—राजा के यहाँ पुत्र जन्म हुआ, सभी ने राजा को हर्ष बधाई और अभिनदन किया। वराहमिहिर ने बालक का आयुष्य १०० वर्ष बताया। किन्तु १४ पूर्वधर आ श्री भद्रबाहुस्वामी ने श्रुतज्ञान के बल से कहा कि बालक का आयुष्य ७ दिन का ही है और ७ दिन के बाद बिडाल से उसकी मृत्यु होगी। इसीलिए वे बालक के जन्म की बधाई करने राजा के पास नही गये थे।

राजा ने उन्हे बुलाया और पूछा कि बधाई करने क्यो नही आये? तब इन्होने सब बात सही-सही बता दी। राजा ने राजमहल मे चौकी करवा दी और सभी बिडाल को नगर के बाहर निकलवा दिये। सब कुछ सुरक्षा प्रबध करने पर भी ७ वें दिन बिडाल के चित्र से उत्कीर्ण लोहे की अर्गला गिरने मे बालक की मृत्यु हो गयी। आचार्य श्री का जयवाद हुआ और वराहमिहिर की अपकीर्ति। वह अपमानित होकर सन्यासी बन गया और मर कर व्यतर देव बना। देव बनकर वह श्री सघ के ऊपर उपद्रव करता है। तब उपद्रव के निवारण हेतु १४ पूर्वधर श्री भद्रबाहुस्वामी महाराज ने 'उवसग्गहर स्तोत्र' की रचना की, जिसके प्रभाव मे उपद्रव दूर हुआ।

(४) इस प्रसग के विषय मे 'विजय प्रशस्ति' ग्रथ की टीका मे लिखा है कि—

*** **उवसग्गहरं थुत्तं, काउणं जेण संघकल्लाणं ।**
करुणापरेण विहियं, सो भद्दबाहुगुरु जयइ ।। ***

अर्थ:—जिन्होंने संघ के कल्याण निमित्त उवसग्गहरं स्तोत्र बनाया वे दयानिधि परमकृपा करने वाले श्री भद्रबाहुस्वामी गुरुदेव की जय हो !

(५) उवसग्गहरं स्तोत्र की महिमा गाते हुए समर्थ शास्त्रकार पंडित श्री देवविमल गणि म. लिखते हैं कि—[हीरसौभाग्य काव्य—सर्ग ४, श्लोक २६]

*** **उपप्लवो मन्त्रमयोपसर्गहरस्तवेनाऽवधि येन संघात् ।**
अनुष्मतो जाङ्गुलीकेन जाग्रद्गरस्य वेगः किल जाङ्गुलीभिः ।।

अर्थ:—संघ में उत्पन्न हुए उपद्रव को मंत्रयुक्त उवसग्गहरं नाम के स्तोत्र की रचनाकर जिन्होंने नाश किया, जैसे मानव शरीर में विषधर के फैलते हुए विष को जांगुलिमंत्र के द्वारा जांगुली (गारुडिक) दूर करते हैं ।

इस महान् उवसग्गहरं स्तोत्र की अनेक टीकाएँ विद्यमान हैं—

(क) आ. चन्द्रसूरिजी कृत लघुवृत्ति–१२वीं सदी की रचना है ।
(ख) श्री पार्श्वदेव गणिकृत लघुवृत्ति–१३वीं सदी की रचना है ।
(ग) आ. जिनप्रभसूरिकृत व्याख्या–१४वीं सदी की रचना है ।
(घ) आ. श्री जयसागरसूरि कृत वृत्ति–१५वीं सदी में यह टीका बनाई गई है ।
(ङ) आ. श्री हर्षकीर्तिसूरि कृत वृत्ति–१७वी सदी की यह रचना है ।
(च) उपाध्याय श्री सिद्धिचंद्रगणि कृत व्याख्या टीका–यह १८वी सदी की रचना है ।

इस समय उवसग्गहरं स्तोत्र की ५, ७, ९, ११, १३, १७ और २१ गाथाएँ भी प्राप्त होती हैं । आ. श्री भद्रबाहु स्वामी महाराज १४ पूर्वधर थे । श्रुत केवली थे । अतः १४ पूर्व के अगाधज्ञान के बल से 'उवसग्गहरं स्तोत्र' की रचनाकर आपत्तिग्रस्त जैन संघ का उद्धार किया था ।

आपने निमित्तज्ञान के बल से उस समय राजा के आगे दो घटनाएँ कही थी, जो सर्वथा सत्य हुई थी और जिससे जैन शासन की अद्भुत प्रभावना हुई थी, इसलिए जिनागम कथित आठ शासन प्रभावक में 'निमित्तक' के रूप में आपको भी गिने शासन प्रभावक कहे हैं, यथा--

(९) भद्रबाहु परे जेह निमित्त कहे, पर मत जिपण काज ।
तेह निमित्ती ए चौथो जाणिए, श्री जिन शासन राज ।।

(न्याय विशारद पू. उपाध्याय श्री यशोविजयजी म. कृत सम्यक्त्व के ६७ बोल की सज्झाय में से)

श्रमण भगवान श्री महावीर देव की पाट शोभानेवाले सातवें पट्टधर श्रा श्री भद्रबाहुस्वामी महाराज की दीक्षा ४५ वर्ष की उम्र मे हुई थी । आप वीर नि० सवत् १५६ मे ६२ वर्ष की उम्र मे युगप्रधानपद पर आरूढ हुए थे और ७६ वर्ष की उम्र मे वीर सवत् १७० मे आपका स्वर्गगमन हुआ था ।

आप श्रुतकेवली यानी अतिम १४ पूर्व के धारक थे, आपने १४ पूर्व का सूत्र से और १० पूर्व तक का अर्थ से भी ज्ञान पू श्रा श्री स्थुलिभद्रजी को करवाया था । दृष्टिवाद का ज्ञान लुप्त होने से आपने ही बचाया था । इस विषय मे रोमाचक घटना प्रसग इस प्रकार है —

पाटलीपुत्र मे प्रथम आगमवाचना—

आचार्य श्री भद्रबाहुस्वामी के समय मे पाटलीपुत्र नगरी मे बहुत बडी सख्या मे श्रमण सघ की परिषद् मिली थी । उस समय १२ वर्ष का भीषण अकाल पड़ा था । जैसे ही १२ साल के दुर्भिक्ष की समाप्ति हुई और सुभिक्ष हो जाने पर समुद्र तटवर्ती विभिन्न क्षेत्रो मे गये हुए श्रमणवृ द पुन पाटलीपुत्र लौटे । तब पाटलीपुत्र मे श्रमणो द्वारा आगम शास्त्रो की वाचना हुई । महावीर भगवान के शासन मे यह प्रथम आगम वाचना थी । आगम वाचना के विषय मे पू आ श्री हरिभद्रसूरीश्वरजी महाराज कृत 'उपदेशपद' मे इस प्रकार का उल्लेख है—

(७) जाओ अ तम्मि समए, दुक्कालो य दोय दस य वरिसाणि ।
सव्वो साहुसमूहो गओ तओ जलहि तीरेसु ॥

अर्थ —उस काल मे १२ वर्ष का अकाल पडा इसलिए सभी साधु समूह समुद्रतट प्रदेश मे चला गया ।

तदुवरमे सो पुणरवि, पाडलिपुत्ते समागओ विहिया ।
सघेण सुयविसया, चिंता किं कस्स अत्थेति ॥

अर्थ —अकाल की समाप्ति होने पर विहार करते-करते श्रमण समूह फिर से पाटलीपुत्र मे लौट आया । तब श्री सघ को श्रुतज्ञान के विषय मे चिता हुई कि किस-किस को कितना-कितना शास्त्रज्ञान कठस्थ रहा है ?

ज जस्स आसी पासे, उद्देसज्झयणमाई सघडिउ ।
त सव्व एक्कारस-अगाइ तहेव ठवियाइ ॥

अर्थ—बाद मे जिसके पास जितना उद्देशा अध्ययन आदि जो भी कुछ याद था, वे सब पाठ इकट्ठाकर ११ अग सजोये गये ।

(८) श्री आवश्यक चूर्णि शास्त्र मे इस विषय मे पाठ इस प्रकार है —

"तम्मिय काले बारस वरिसो दुक्कालो उवट्ठितो । संजाता इत्तो-इत्तो य समुद्दतीरे गच्छित्ता पुणरवि 'पाडलिपुत्ते' मिलिता । तेसिं अण्णस्स उद्देसो, अण्णस्स खंडं, एवं संघाडिते हि एक्कारस अंगाणि संघातिताणि, दिट्ठिवादो नत्थि । 'नेपाल' वत्तिणीए य भद्दबाहुस्वामी अच्छंति चोद्दसपुव्वी, तेसिं संघेण पत्थवितो संघाडओ 'दिट्ठिवाद' वाएहि त्ति । गतो, निवेदितं संघकज्जं । तं ते भणंति—दुक्काल निमित्तं महापाणं न पविट्ठो मि तो न जाति वायणं दातुं । पडिनियत्तेहिं संघस्स अक्खातं । तेहि अण्णो वि संघाडओ विसज्जितो, जो संघस्स आणं अतिक्कमति तस्स को दंडो ? तो अक्खाई—उग्घाडिज्जइ । ते भणंति मा उग्घाडेह पेसह मेधावी, स तं पडिपुच्छगाणि देमो ।"

यह ११ अंग स्थापित करने का कार्य आ. श्री स्थूलिभद्र स्वामी की अध्यक्षता में, पाटलीपुत्र में चतुर्विध श्री संघ की सहायता से वीर निर्वाण संवत् १६० के आसपास हुआ ।

११ अंग व्यवस्थित हो गये किन्तु एक विकट समस्या खड़ी हुई । वह यह कि—बारहवें अंग दृष्टिवाद के जानकार कोई मुनि उस समय वहां विद्यमान नहीं थे । उस समय १२वें अंग के जानकार, १४ पूर्वधर, श्रुतकेवली पू. आ. श्री भद्रबाहुस्वामी महाराज विद्यमान थे । केवल वे ही १४ पूर्वों की सम्पूर्ण वाचनाएँ श्रमणों को देकर दृष्टिवाद को नष्ट होने से बचा सकते थे । किन्तु वे उस समय नेपाल देश में थे । उनको बुलाने के लिए श्री संघ ने दो श्रमणों को नेपाल भेजे । दोनों मुनिवरों ने श्री भद्रबाहुस्वामी को मिलकर श्री श्रमणसंघ की भावना बताई और पाटलीपुत्र पधारने की विनती की । आचार्य श्री ने बताया कि "मैं अभी 'महाप्राण' नाम का ध्यान कर रहा हूं, जिस की १२ वर्ष में सिद्धि होगी । सिद्धि होने से १४ पूर्वों का पाठ एक मुहूर्त मात्र में हो सकेगा । इसलिए मैं आने से असमर्थ हूं ।"

आचार्य श्री का संदेश लेकर साधु वापस लौटे । श्री संघ को संदेशा सुनाया, संदेशा सुनकर दूसरे दो साधुओं को भेजे और कहलाया कि-'जो संघ की आज्ञा का पालन न करे उसे क्या प्रायश्चित्त आता है ?'—दो साधु ने आचार्यश्री के पास आकर प्रश्न पूछा ।

आचार्य श्री ने उत्तर दिया—'संघ की बात न माने उसे संघ से बाहर कर देना । याने उसका बहिष्कार कर देना ।' आचार्य श्री का उत्तर सुनकर साधुओं ने [illegible] आप भी इसी शिक्षा के पात्र हैं ।'

[illegible]

इसी प्रकार ५०० साधुओ आचार्य श्री भद्रबाहुस्वामी म साहेब के पास आये । इनमे आ श्री स्थूल-भद्रसूरि १४ पूर्व सूत्र से और १० पूर्व तक अर्थ से पढे ।

ग्रन्थ सर्जन

१४ पूर्वधर, श्रुत केवली आ श्री भद्रबाहुस्वामी म ने अपनी विद्वता का लाभ आर्यदेश की जनता को विपुलप्रमाण मे दिया है । वे आगम ज्ञान के अद्वितीय निधान थे । आगम शास्त्रों के ज्ञान रूपी मदिर के गूढ खजाने को पाने के लिए आपने चावी रूप १० निर्युक्तियो की रचना की है । इस विषय मे शास्त्रपाठ है, यथा (६) 'गच्छाचार पयन्ना' नाम के शास्त्र की दोघट्टी वृत्ति मे लिखा है कि—

+++अह जुगप्पहाणागमो सिरिभद्रबाहूस्वामी आयारग (१), सूयगडग (२), आवस्सय (३), दसवैयालिय (४), उत्तरज्झयण (५), दसा (६), कप्प (७), ववहार (८), सूरियपन्नत्ति उवग (९), रिसिभासियाण (१०), दस निज्जुत्तीओ काऊण जिणसासण पचमसुयकेवलिपयमणुहविऊण य समए अणसणविहाणाण तिदसावास पत्तोसि ।+++

अर्थ —युगप्रधान आचार्य श्री भद्रबाहु स्वामी महाराज ने (१) आचाराग, (२) सूत्रकृताग (३) आवश्यक (४) दशवैकालिक (५) उत्तराध्ययन (६) दशाश्रुतस्कन्ध (७) कल्प (८) व्यवहार (९) सूर्यप्रज्ञप्ति और (१०) ऋषि भाषित, इन १० शास्त्रो के ऊपर निर्युक्तियो की रचना कर जिनशासन की महती सेवा की । पचम तथा अतिम श्रुत केवली के रूप मे युगप्रधान आचार्य का महिमावन्त पद वहन कर अनशन पूर्वक आप देवलोक मे पधारे ।

(१०) आपने दशाश्रुतस्कध, कल्प, व्यवहार और निशीथ-इन चार छेद सूत्रो की रचना की है । श्री दशाश्रुतस्कध शास्त्र की चूर्णि मे उल्लेख है कि—

+++वदामि भद्दबाहु, पाईण चरिमसयलसुयनाणीं ।
सुत्तस्स कारगमिसि, दसासुय-कप्पे य ववहारे ।।+++

अर्थ —सपूर्णश्रुत के अतिम जानने वाले, दशाश्रुतस्कध, कल्पश्रुतस्कध और व्यवहार श्रुतस्कध को बनानेवाले ऐसे प्राचीन गोत्र के महर्षि भद्रबाहुस्वामी को मैं प्रणाम करता हूँ । ["प्राचीन" शब्द यहा निर्विवादरूप से गोत्र की सज्ञा है]

(११) पू आ श्री मुनिरत्नसूरि कृत 'अममचरित्र' मे लिखा है कि—

श्री भद्रबाहुर्व प्रीत्यै, सूरि शौरिरिवास्तु स ।
यस्माद् दशाना जन्मासीत्, निर्युक्तीनामृचामिव ।।

अर्थ —जैसे शौरि ने दशार्हों को जन्म दिया है इसी प्रकार जिन्होने वेद की ऋचाओ के समान १० निर्युक्तियो को जन्म दिया है, वे आ भद्रबाहुसूरि आपकी प्रीति के लिए हो ।

(१२) १४ पूर्वधर भद्रबाहु स्वामी म. को जैन शासन के अष्ट-प्रभावकों में से एक प्रभावक बताये हैं । ये चौथे निमित्तशास्त्र के द्वारा शासन प्रभावक हैं । दशाश्रुत-स्कंध, कल्पसूत्र और व्यवहार सूत्र—ये तीन छेद सूत्र, आवश्यक निर्युक्ति आदि १० निर्युक्तियाँ, उवसग्गहर स्तोत्र और भद्रबाहु संहिता ये १५ ग्रन्थ पू. आ. श्री भद्रबाहु स्वामी म. की कृतियाँ हैं । ज्योतिष विद्या के मान्यशास्त्र 'सूर्य प्रज्ञप्ति' पर भी १४ पूर्वधर आ. पू. श्री ने निर्युक्ति की रचना की है । यानी १४ पूर्व के अगाध ज्ञान में ज्योतिष ज्ञान भी सम्पूर्ण आ जाता है । आपके द्वारा रचा गया विशाल जैन वांग्मय इस प्रकार है—

शास्त्र का नाम		गाथा श्लोक	शास्त्र का नाम		गाथा (श्लोक)
आवश्यक निर्युक्ति	—	२२५०	दशाश्रुतस्कंध	—	१८३०
दशवैकालिक ,,	—	४४५	पंचकल्प मूल	—	११३३
उत्तराध्ययन ,,	—	६०७	बृहद् कल्प मूल	—	४७३
आचारांग ,,	—	३६२ (३६८)	पिण्ड निर्युक्ति	—	७०८
सूत्र कृतांग ,,	—	२०८	ओघ ,,	—	११६४ (११७०)
दशाश्रुतस्कंध ,,	—	१४४	पर्युषणा कल्प	—	६८
बृहद् कल्पसूत्र ,,	—	६२५	संसक्त ,,	—	६४ (अप्राप्य)
व्यवहार सूत्र ,,	—	अप्राप्य	उवसग्गहर स्तोत्र	—	५
सूर्य प्रज्ञप्ति ,,	—	,,	वासुदेव चरियं	—	१,२५,०००
ऋषि भाषित ,,	—	,,	भद्रबाहु संहिता	—	—
व्यवहार सूत्र मूल	—	३७३ (६००)			

पू. आ. श्री भद्रबाहु स्वामी महाराज के इन सर्जन से उनकी अद्भुत ज्ञानप्रभा, तत्कालीन सर्व दर्शनों का परिशीलन, गणधरों के वाद की निपुणता, देश-विदेश का ज्ञान, इतिहास विज्ञता, वीतराग वाणी को सरलता से प्रदर्शित करने की कला, स्याद्वाद शैली को व्यापक बनाने की इच्छा, उत्सर्ग और अपवाद का युक्तिसंगत विश्लेषण करने की व्यवस्था शक्ति, काव्य शक्ति इत्यादि का परिचय मिलता है ।

उनके द्वारा रचित श्री आवश्यक निर्युक्ति शास्त्र में वर्तमान अवसर्पिणी काल की ऐतिहासिक घटनाक्रम का शृंखलाबद्ध वर्णन है । चौबीसों तीर्थंकरों के माता-पिता, जन्म भूमि, पूर्व भवों, पंचकल्याणक कहाँ हुए ? इत्यादि सविस्तार दिखाया गया है । फिर १२ चक्रवर्ती, ९ बलदेव, ९ वासुदेव, ९ प्रति वासुदेव आदि ६३ शलाका पुरुषों के जीवन चरित्रों का ऐतिहासिक रोचक वर्णन प्राप्त होता है ।

छेद सूत्रों पर आपके सर्जन ने अद्भुत पाण्डित्य, दीर्घ दृष्टि और स्याद्वाद-रहस्यवेत्ता के रूप में आपको विश्व विश्रुत बना दिया है । इसमें उत्सर्ग और अपवाद मार्ग के सूक्ष्म विश्लेषण द्वारा जैन शासन के सूक्ष्म स्याद्वाद सिद्धान्त को इसमें चार

चाँद लगा दिये हैं । साथ मे आपने यह भी समझाया है कि—"मौलिकता और नव-सर्जन के नाम से मूल सिद्धान्त की वफादारी कभी भी गँवानी नही और जितना उत्सर्ग मार्ग अपने स्थान मे वलवान है, अपवाद मार्ग उतना ही अपने स्थान पर तुल्य वलवान है ।

पू आचार्य श्री भद्रवाहु स्वामी महाराज के अगाध ज्ञान के साक्ष्य पश्चाद्वर्ती महान् आचार्य भी है । यथा—

(१२) श्री ओधनिर्युक्ति शास्त्र की श्री द्रोणाचार्य म कृत टीका मे १४ पूर्वधर भद्रवाहु स्वामी को ही निर्युक्तिकार वताते हुए लिखा है कि—

ओघ निर्युक्ति शास्त्र (पत्र-३)=गुणाधिकस्य वन्दन नत्वधमस्य यत उक्तम्—'गुणाहिए वदणय' । भद्रबाहु स्वामिनश्चतुर्दश पूर्वधरत्वाद् दशपूर्वधरादीना च न्यूनत्वात् कि तेषा नमस्कारमसौ करोति ? इति । अत्रोच्यते गुणाधिका एव ते, अव्यवच्छित्तिगुणाधिक्यात्, अतो न दोष इति ।

अर्थ —गुणाधिक को वन्दन होता है, गुणहीन को नही, कहा भी है—'गुणाधिक को वन्दन होता है' । भद्रवाहु स्वामी १४ पूर्वधर होते हुए भी उनसे न्यून १० पूर्वधरो आदि को नमस्कार क्यो करते हैं ?—इसका उत्तर यह है कि दश पूर्वधर भी गुणाधिक ही है, क्योकि १० पूर्व धारक १० पूर्व को धारण करके उसे नष्ट होने से वचाते है । इसलिए १४ पूर्वधर को वन्दन किया यह युक्तियुक्त है ।

अर्थात् १४ पूर्ववर, निर्युक्तिकार भद्रवाहु स्वामी म ने १० पूर्वधर को वन्दन किया, इसलिए वे १४ पूर्वधर नही थे, ऐसा नही कहना ।

(१३) उत्तराध्ययन सूत्र की निर्युक्ति मे निर्युक्तिकार पू आ श्री भद्रवाहु स्वामी महाराज ने अपने पट्ट प्रभावक पू आ श्री स्थूलभद्र सूरि के विषय मे लिखा है कि—

भगवपि स्थूलभद्दो, तिक्खे चकम्मिओ न उण छिन्नो ।
अग्गिसिहाए वुत्थो चाउम्मासे न उण दड्ढो ।।

अर्थ —स्थूलभद्र स्वामी तीक्ष्ण धारा पर चलने पर भी पैर मे छिदाये नही, अग्नि की ज्वाला मे चातुर्मास विताने पर भी जले नही ।

उक्त उत्तराध्ययन निर्युक्ति गाथा मे 'भगव' शब्द का अर्थ 'भाग्यवान्' ऐसा (करना छोडकर कुछ विद्वान् 'भगवान' ऐसा करते हैं । और फिर ऐसा) तर्क देते है कि अपने शिष्य की भगवान् तुल्य स्तुति करना लोक विरुद्ध होने से इस निर्युक्ति

के रचनाकार १४ पूर्वधर आ. श्री भद्रबाहु स्वामी नहीं है। किन्तु ऐसा भ्रांतिपूर्ण तर्क अनुचित है।

(१४) भगवान श्री शांतिनाथ चरित्र के मंगलाचरण श्लोक में प्राचीनाचार्य ने लिखा है कि—आपने वसुदेव चरित्र लिखा—

******वंदामि भद्दबाहुं जेण य अइरसियं बहुकलाकलियं।
रइयं सवायलक्खं चरियं वसुदेवरायस्स।******

अर्थ :—जिन्होंने अति रसमय व विविध कलाओं से युक्त वसुदेव के सवा लाख श्लोक प्रमाण चरित्र की रचना की है, ऐसे भद्रबाहु स्वामी को मैं प्रणाम करता हूँ।

(१५) आपने श्री कल्पसूत्र शास्त्र की रचना की थी इस विषय में पू. श्री क्षेमकीर्तिसूरिजी बृहत्कल्प सूत्र की टीका में लिखते हैं कि—

**"श्री कल्पसूत्रममृतं विबुधोपयोग-योग्यं, जरामरण दारुण दुःख हारि।
येनोद्धृतं मतिमता मथितात् श्रुताब्धेः, श्री भद्रबाहु गुरवे प्रणतोस्मि तस्मै ॥**

अर्थ :— जिन्होंने विबुधजनों के योग्य, जन्मजरामरण के भयंकर दुःख नाशक, श्रुतमहासागर का मंथन कर श्री कल्पशास्त्र रूपी अमृत को निकाला वे श्री भद्रबाहुगुरु को मैं भक्तिभाव से प्रणाम करता हूं।

(१६) श्री पंचकल्प भाष्य की चूर्णि में पू. श्री भद्रबाहुस्वामी को आचार कल्प, दशाश्रुतकल्प और व्यवहारश्रुत कल्प के प्रणेता (रचयिता) बताये हैं। यथा:—

"तेण भगवता आयारपकप्प, दसाकप्प, ववहारा य नवमपुव्वी नी संवनूता निज्जढा।"

अर्थ:— आपने इन शास्त्रों को नवें पूर्व के सारूप में रचा।

(१७) विक्रम की पांचवीं शताब्दी के प्रारंभ में संदृब्ध 'तित्थोगालिपइण्णा' नाम के ग्रन्थ में पू. आचार्य श्री भद्रबाहुस्वामी म. को १४ पूर्वधर तथा छेदसूत्रों के रचयिता बताये हैं। यथा:—

**"सो वि य चोद्दसपुव्वी, बारसवासाइं जोगपडिवन्नो।
सुत्तत्थेण निबंधइ, अत्थं अज्झयणं बंधस्स ॥"**

(तित्थोगालिपइन्ना—अप्रकाशित)

अर्थ:— वह भी चौदहपूर्वी १२ साल तक योग [illegible] के अर्थ का सूत्रों के रूप में [illegible] किया।

(१८) श्री [illegible] सूत्र की टीका [illegible]

अनुयोगदायिन सुधर्मास्वामि प्रभृतय यावदस्य भगवतो निर्युक्तिकारस्य भद्रवाहुस्वामिनश्चतुर्दशपूर्वधरस्याचार्यो अतस्तान् सर्वानिति।

अर्थ —अनुयोग देने वाले गणधर श्री सुधर्मास्वामी आदि यावत् १४ पूर्वधर, निर्युक्ति के रचयिता भगवान् श्री भद्रवाहुस्वामी आदि सर्व आचार्य भगवन्तो को (मैं प्रणाम करता हूँ।)

(१६) पू आ श्री भद्रवाहुस्वामी द्वारा रचित निर्युक्तियो मे उनके स्वर्ग-गमन के वाद की भी कुछ घटनाओ का वर्णन किया गया है। जिसके कारण कई आधुनिक भारतीय एव यूरोपीय विद्वान् ऐसा कहते हैं कि निर्युक्तियो की रचना १४ पूर्वधर आ श्री भद्रवाहुस्वामी म की नही है। इस शका और भ्रम का एक उत्तर यह है कि—कई युगो से निर्युक्ति मे कथित गाथाएँ तथा भाष्य मे कथित गाथाओ का मिश्रण, एकीकरण हो गया है, जिससे उक्त भ्रम हुआ प्रतीत होता है। दूसरी वात यह है कि—पू आ श्री भद्रवाहुस्वामी म १४ पूर्व के धारक श्रुतकेवली थे इसलिए वे भविष्य-कालीन घटनाओ को जानते थे।

इस विपय मे श्री उत्तराध्ययन आगम सूत्र की श्री शान्तिसूरिजी द्वारा कृत पाईय टीका मे लिखा है कि—

+++**न च केषाचिद् इह उदाहरणाना निर्युक्तिकालाद् अर्वाक् कालभाविता इत्यन्योक्तत्वमाशकनीयम्, स हो भगवान् चतुर्दशपूर्ववित् श्रुतकेवली कालत्रयविपय वस्तु पश्यति एव। इति कथमन्यकृतत्वाशका?** +++

अर्थ —आ श्री भद्रवाहुस्वामी द्वारा कृत निर्युक्तियो मे वाद मे होने वाली कुछ घटनाओ के उल्लेख भी किये गये हैं। इससे ऐसी शका नही करना कि निर्युक्तिकार कोई अन्य है, क्योकि भगवान श्री भद्रवाहुस्वामी १४ पूर्वधर श्रुतकेवली तीन काल के वस्तु-विपयो को देखते-जानते थे। इसलिए ऐसी शका नही करना।

मुमुक्षुओ के लिए श्री शातिसूरिजी द्वारा दिया गया यह मार्गदर्शन वहुत मननीय और आदरणीय है।

(१६) श्री विशेपावश्यक सूत्र की टीका के रचयिता पू आ श्री मलधारी हेमचन्द्रसूरिजी म ने पू आ श्री भद्रवाहुस्वामी महाराज को इस सूत्र की निर्युक्ति वनाने वाले उपकारी माने गये हैं। यथा —(टीका पत्र-१)

+++**अस्य चातीव गम्भीरार्थता सकल साधु-श्रावकवर्गस्य नित्योपयोगिता च विज्ञाय चतुर्दश पूर्वधरेण श्री मद् भद्रबाहुनैतद्व्याख्यान रूपा 'अभिनिबोहिणाण' इत्यादि प्रसिद्धग्रन्थ रूपा निर्युक्ति कृता।*****

अर्थ —विशेपावश्यक सूत्र की अतिगम्भीरार्थता, साधु-साध्वी और श्रावक वर्ग मे नित्योपयोगिता को जानकर १४ पूर्वधर श्रीमद् आ भद्रवाहुस्वामी महाराज ने व्याख्यान स्वरूप 'आभिनिवोहिणाण' इत्यादि प्रसिद्ध ग्रन्थ रूप निर्युक्ति की है।

(२०) श्री बृहत् कल्प पीठिका की टीका में पू. आ. श्री मलयगिरि सूरिजी ने लिखा है, कि (टीका पत्र-२)

"'साधुनामनुग्रहाय चतुर्दशपूर्वधरेण भगवता भद्रबाहुस्वामिना कल्पसूत्रं व्यवहार-सूत्रं चाकारि, उभयोरपि च सूत्रस्पर्शिकनिर्युक्तिः।'"

अर्थ :—साधुओं के उपकार के लिए १४ पूर्वधर भगवान श्री भद्रबाहुस्वामी म. ने कल्पसूत्र और व्यवहारसूत्र की रचना की और दोनों की सूत्रस्पर्शिक निर्युक्तियाँ रची।

(२१) पू. आ. श्री हिमवंतसूरिजी म. वीर निर्वाण से करीब ७०० वर्ष के आसपास हुए हैं। आपके द्वारा रचित श्री हिमवन्त स्थविरावली एक अद्भुत प्राचीन प्रामाणिक इतिहास ग्रन्थ है। उस में ऐसा उल्लेख है कि—निर्युक्तिकार १४ पूर्वधर पू. आ. श्री भद्रबाहुस्वामी म. है :—

"'वंदे संभूइ विजयं भद्दबाहुं, तहा मुणि पवरम्।
चउद्दस पुव्वीणं खु, चरम कयसुत्तनिज्जुत्ति ॥ ७ ॥'"

अर्थ :—अन्तिम १४ पूर्वधर आ. भद्रबाहुस्वामी म. को मैं प्रणाम करता हूँ, जिन्होंने सूत्रों की निर्युक्तियों की रचना की है।

पू. आ. श्री हिमवन्त सूरिजी का नाम नन्दीसूत्र की स्थविरावली में आता है। हिमवन्त स्थविरावली की बहुत सी गाथाएँ नन्दीसूत्र में लिखी मिलती हैं। पू. हिमवन्ताचार्य म. का काल वि. सं. २०२ के पहले का है जिसका उल्लेख हिमवन्त स्थविरावली में स्पष्टतया किया गया है।

युगप्रधानाचार्य पू. श्री स्कंदिल सूरिजी के तत्त्वावधान में मथुरा में विक्रम सं. १५३ (अर्थात् वीर निर्वाण से करीब ६२३ वर्ष) में साधु सम्मेलन हुआ था, ऐसा उल्लेख श्री हिमवंत स्थविरावली में इस प्रकार है :—

"'स्वल्पमतिभिक्षूणामुपकारार्थं चाऽऽर्यस्कंदिलविरोत्तंसेन प्रेरिता गंधहस्तिन एकादशाङ्गानां विवरणानि भद्रबाहुस्वामिविहित निर्युक्त्यानुसारेण चक्रुः।'"
[हिमवंत स्थविरावली पृ० १०]

अर्थ :— अल्पमति मुनियों के उपकारार्थ आचार्य स्कंदिलसूरि ने गंधहस्त्यादि सूरि की सम्मति से ११ अंग व्यवस्थित किये और गंधहस्ति सूरिजी ने पू. स्कंदिलाचार्य की प्रेरणा से ११ अंग के ऊपर १४ पूर्वधर श्री भद्रबाहु स्वामी द्वारा रचित निर्युक्तियों के अनुसार विवरण लिखे।

इस प्रमाण पाठ से यह निर्विवाद सिद्ध होता है कि—१४ पूर्वधर श्रुत केवली पू. आ. श्री भद्रबाहुस्वामी म. निर्युक्तिकार है। और वि. सं. १५३ में प्रथम मुनि सम्मेलन हुआ था, व बाद में निर्युक्तियों के सहारे विवरण लिखे गये थे। नन्दीसूत्र की स्थविरावली में पू. आ. श्री हिमवन्तसूरिजी को पू. आ. श्री स्कंदिलाचार्य के शिष्य बताये गये है। यहाँ

वीर निर्वाण से ८२३ के उल्लेख मे भी १४ पूर्वधर, श्रुतकेवली पू आ श्री भद्रबाहु स्वामी म ही निर्युक्तिकार के रूप मे सिद्ध होते है।

(२२) श्री दसवैकालिक सूत्र की निर्युक्ति के ऊपर चूर्णि लिखने वाले पू आ श्री अगस्त्यसिंह सूरिजी वीर निर्वाण की (तीसरी) शताब्दि मे हुए है। इससे यह सिद्ध होता है कि निर्युक्तिकार १४ पूर्वधर पू श्री भद्रबाहु स्वामी म ही है।

(२३) श्री आगमशास्त्रो पर लिखी गई निर्युक्ति, वृत्ति, चूर्णि, भाष्य और टीका आदि बहुत महत्त्वपूर्ण ह ऐसा कथन स्थानकवासी आचार्य श्री हस्तीमलजी महाराज अपने 'जैन धर्म का मौलिक इतिहास-खण्ड ३ पृ ४५१ पर करते है। यथा—

निर्युक्ति, अवचूर्णि चूर्णि, भाष्य और टीका–इन सब की गणना आगमो के व्याख्या ग्रन्थो के रूप मे की जाती है। जहां आगमो का गूढाथ समझ मे न आये वहां पहले निर्युक्ति की, निर्युक्ति से भी समझ मे न आये तो क्रमश अवचूर्णि, चूर्णि, भाष्य और टीका ग्रथो की सहायता की अपेक्षा रहती है। इन टीकाकारो ने टीका आदि की रचना कर जिनशासन की महती सेवा की। ****

(२४) अनेक विद्वानो और मुमुक्षुओ आगम साहित्य पर लिखी गयी निर्युक्ति, वृत्ति चूर्णि, भाष्य और टीकाओ की सराहना करते है। क्योकि मूल आगम सूत्रो को इस पचागी (निर्युक्ति, चूर्णि, भाष्य, टीका) के बिना समझ पाना या अनुवाद करना असभव ही है। जहां तक निर्युक्ति शास्त्र मे सबध है, अनेक विद्वान् एक आवाज मे यह मानते है कि—

"वर्तमान मे उपलब्ध निर्युक्ति साहित्य के निर्माताओ मे पू आ श्री भद्रबाहुस्वामी का स्थान अग्रगण्य है। उन्होने आवश्यक, दशवैकालिक, उत्तराध्ययन, आचाराग, सूत्र-कृताग, दशाश्रुतस्कध, कल्प, व्यवहार, सूर्यप्रज्ञप्ति और ऋषिभाषित इन १० सूत्रो पर दश निर्युक्तियो की रचनाएँ की है।" श्री आवश्यक निर्युक्ति शास्त्र मे उक्त बात का उल्लेख किया गया है। यथा—

+++आयारस्स, दसवेयालियस्स, तह उत्तरज्झयायारे।
सुयगडे निज्जुति, वोच्छामि तहा दसाण च ॥ ८४ ॥
कप्पस्स य णिज्जुत्ति, ववहारस्सेव परम निउणस्स।
सूरिय पन्नत्तीए, वुच्छ इसिभासियाण च ॥ ८५ ॥+++

१४ पूर्वधर, श्रुत केवली पू आ श्री भद्रबाहु स्वामी महाराज ने निर्युक्तिकार की रचना कर जैनवाङ्मय की श्री को वृद्धिमत किया है। आगमो का अध्ययन करने के इच्छुक मुनियो एव साधको के लिए ये निर्युक्तियाँ प्रकाश-प्रदीप तुल्य है। आगमो के गूढार्थो की, पारिभाषिक शब्दो की दृष्टान्तो, कथानको आदि के माध्यम से बोधगम्य शैली मे सुस्पष्ट रूपेण इन निर्युक्तियो मे व्याख्या की गयी है। अत ये आगमो के अध्ये-

छात्रों तथा अध्यापकों का दोनों के लिए समान रूप से बड़ी उपयोगी सिद्ध होती है। निर्युक्तियों की अनेक विद्वानों ने मुक्तकंठ से प्रशंसा की है। इन विद्वानों का कहना है कि—निर्युक्तियों की एक-एक गाथा को ज्ञान का कोष कहा जाय तो अतिशयोक्ति नहीं होगी। आगमों के व्याख्या ग्रन्थों में निर्युक्ति साहित्य का बड़ा महत्त्वपूर्ण स्थान रहा है। निर्युक्तियों में महापुरुषों के जीवन चरित्रों, सूक्तियों, दृष्टान्तों और कथानकों के माध्यम से आगम ज्ञान के साथ-साथ आर्यधरा के प्राचीन धार्मिक, सामाजिक एवं आर्थिक जीवन पर भी पर्याप्त प्रकाश डाला गया है। जिसमें उस समय के जन-जीवन के आचार, व्यवहार, उसके जीवन-दर्शन और हमारी प्राचीन संस्कृति के दर्शन होते हैं।

प्राचीन और अर्वाचीन विद्वानों का एक अभिमत यह है कि १४ पूर्वधर भद्रबाहु स्वामी आवश्यक आदि निर्युक्तियों के रचनाकार तो थे ही साथ-साथ वे अष्टांगनिमित्त और मंत्रविद्या के एक चोटी के विद्वान् थे यद्यपि १४ पूर्व के ज्ञान में निमित्तज्ञान और मंत्रविद्या का सम्पूर्ण अभ्यास आ ही जाता है।

(२५) यहां एक उल्लेखनीय और महत्त्वपूर्ण बात यह है कि—कुछ विद्वान् १४ पूर्वधर भद्रबाहु स्वामी महाराज को निर्युक्तियों के कर्ता नहीं मानते हैं। वे वीर निर्वाण से ३०० वर्ष पर हुए द्वितीय भद्रबाहुस्वामी को निर्युक्तिकार मानते हैं किन्तु उनकी इस भ्रमणा का निरसन हम आगे अनेक प्रमाणों से कर आये हैं। श्वेताम्बर जैन परम्परा में भद्रबाहु स्वामी दो हुए हैं ऐसा कोई उल्लेख या मान्यता नहीं है। दिगम्बर जैन परम्परा में भद्रबाहुस्वामी नामके दो-तीन आचार्य हुए हैं, किन्तु वीर निर्वाण संवत् ३०० के आसपास होनेवाले दिगम्बर परम्परा के आचार्य भद्रबाहुस्वामी को दिगम्बर साहित्यकारों निर्युक्ति शास्त्रों के रचनाकार कतई नहीं मानते हैं। भद्रबाहुस्वामी द्वितीय ने निर्युक्ति लिखी हो, ऐसा थोड़ा सा भी उल्लेख दिगम्बर वाङ्मय में दृष्टिगोचर नहीं होता है और श्वेताम्बर शास्त्रकार एक आवाज से १४ पूर्वधर श्रुतकेवली भद्रबाहु-स्वामी महाराज को ही निर्युक्तिकार मानते हैं। इसलिए कुछ आधुनिक विद्वानों का ऐसा मानना भ्रान्तिपूर्ण है कि १४ पूर्वधर निर्युक्तिकार नहीं थे और द्वितीय भद्रबाहु जो कि दिगम्बर परम्परा में हुए हैं, वे निर्युक्तिकार हैं।

दिगम्बर परम्परा का एक शिलालेख पार्श्वनाथ बस्ती का शिलालेख शक संवत् ५२२ अर्थात वीर निर्वाण संवत् ११२७ पर लिखा है कि—

"महावीरसवितरि परिनिर्वृते भगवत्परमर्षिगौतमगणधरसाक्षात् शिष्यलोहार्य-जम्बु-विष्णुदेव-अपराजित-गोवर्द्धन-भद्रबाहु-विशाख-प्रोष्ठिल-कृत्तिकाय-जयनाम-सिद्धार्थ-धृतिषेण-बुद्धिलादि गुरु परम्परीण वक्रमाभ्यागत महापुरुष-संततिसमवद्योतितान्वय-भद्रबाहुस्वामिना उज्जयन्यामष्टांगमहानिमित्ततत्त्वज्ञेन-त्रैकाल्यदर्शिना निमित्तेन द्वादश-संवत्सरकाल वैषम्यमुपलभ्य कथिते सर्वसंघ उत्तरापथाद्दक्षिणापथं प्रस्थितः।"

[पार्श्वनाथ बस्ति का शिलालेख]

"इस शिलालेख मे क्रमश गौतम, लोहार्य जम्बू, विष्णु, देव, अपराजित, गोवर्द्धन, भद्रबाहु, विशाख, प्रोष्ठिल, कृत्तिकाय, जय, नाग, सिद्धार्थ, धृतिषेण और बुद्धिल इन १६ आचार्यो के नाम देने के पश्चात् इनकी (दिगम्बर परम्परा) उत्तरवर्ती आचार्य परम्परा मे हुए आचार्य भद्रबाहु (द्वितीय) महाराज को अष्टाग निमितज्ञ बताते हुए यह उल्लेख किया गया है कि उन भद्रबाहु स्वामी ने अपने निमित्तज्ञान से भावी द्वादशवार्षिक दुष्काल की सघ को सूचना दी। तदनन्तर समस्त सघ ने दक्षिणापथ की ओर प्रस्थान किया।"

उक्त आचार्य परम्परा दिगम्बर आम्नाय की है और दिगम्बर आम्नाय आ भद्रबाहु स्वामी (द्वितीय) को निर्युक्तिकार के रूप मे नही मानता है। जब कि श्वेताम्बर जैन वाङ्मय मे वीर निर्वाण के ७०० वर्ष के आसपास भद्रबाहु स्वामी नाम के कोई आचार्य हुए हो, ऐसा नाम मात्र का भी उल्लेख नही मिलता है।

पाश्चात्य विद्वान हर्मन जैकोबी ने सर्वप्रथम यह शका उठायी थी कि—निर्युक्तिकार श्रुतकेवली भद्रबाहु स्वामी नही है किन्तु द्वितीय भद्रबाहु स्वामी होने चाहिए। इसके पीछे-पीछे अन्धानुकरण मे कुछ भारतीय विद्वान् भी ऐसी शका करने लगे है कि निर्युक्ति-कार आ भद्रबाहु द्वितीय है। किन्तु इन विद्वानो की ऐसी शका निराधार और भ्रान्ति-मात्र ही सिद्ध हुई है।

दूसरी एक महत्त्वपूर्ण बात यह है कि—निर्युक्तिकार, १४ पूर्वधर आचार्य श्री भद्रबाहु स्वामी महाराज दक्षिण देश मे गये ही नही हैं। इस सत्य-तथ्य को दिगम्बर वाङ्मय से भी पुष्टि मिलती है। यथा —

(२६) दिगम्बराचार्य श्री हरिषेणसूरिजी अपने ग्रन्थ 'बृहत्कथाकोष' (रचनाकाल-विक्रम स ९८९) मे कथा-१३१ मे लिख रहे है कि—

+++प्राप्य भाद्रपद देश, श्रीमदुज्जियिनी सम्भवम्।
समाधिमरण प्राप्य, भद्रबाहु दिव ययौ॥ ४४॥ +++

अर्थ —१४ पूर्वधर श्रुतकेवली आ श्री भद्रबाहु स्वामी उज्जैन के पास के प्रदेश मे—भाद्रपद नाम के प्रदेश मे समाधिमरण पूर्वक स्वर्ग मे गये।

(२७) दिगम्बर ब्रह्मचारी श्री नेमिदत्त मुनि भी श्रुतकेवली आ श्री भद्रबाहु-स्वामी महाराज का स्वर्गगमन दक्षिण मे नही किन्तु उज्जैन के आसपास हुआ था, ऐसा उल्लेख आराधना कथाकोष मे करते हैं।

+++श्रुतपिपासादिक जित्वा, सन्यासेन समन्वितम्।
उज्जयिन्या सुर्धभद्र, वटवृक्षसमीपके॥ २६॥

स्वामी समाधिना मृत्वा, सम्प्राप्तः स्वर्गमुत्तमम् ॥ २७ ॥

[आराधना कथा कोष-कथा—६१]

अर्थ :—ज्ञानी, कल्याणकारी, संयमधारी आ. श्री भद्रबाहुस्वामी महाराज उज्जयिनी नगरी के पास में क्षुधा-पिपासा को जीतकर वटवृक्ष के समीप समाधिपूर्वक मृत्यु पाकर ऊँचे देवलोक में गये ।

(२८) चन्द्रगिरि पहाड़ पर, पार्श्वनाथ बस्ती स्थित कानडी शिलालेख के "उत्तरापथाद्दक्षिणापथं प्रस्थितः" अर्थात् द्वितीय भद्रबाहुस्वामी दक्षिण में पधारे—इस लेख से भी १४ पूर्वधर पू. आ. श्री भद्रबाहुस्वामी म. दक्षिण में नहीं गये है, यह सत्य सिद्ध होता है ।

(२९) दिगम्बराचार्य श्री देवसेनजी वीर संवत् ६०६ में श्वेताम्बर-दिगम्बर के भेद पड़े है ऐसी बात लिखते हैं । और श्वेताम्बर शास्त्रों वीर संवत् ६०६ में भेद पड़ा ऐसा लिखते है । इसलिए आ. वज्रस्वामी के बाद या द्वितीय भद्रबाहु स्वामी के बाद दिगम्बर-श्वेताम्बर के भेद पड़ने की मान्यता ही युक्तियुक्त है ।

इस से यह भी सिद्ध होता है कि कुछ अर्वाचीन विद्वानों १४ पूर्वधर श्रुतकेवली भद्रबाहुस्वामी म. के दक्षिणगमन और इस के बाद श्वेताम्बर और दिगम्बर का भेद पड़ा ऐसा मानते हैं, किन्तु उसमें कोई तथ्य नहीं है ।

पू. आ. श्री मलयसूरिजी, पू. आ. श्री मुनिरत्न सूरिजी. पू. श्री क्षेमकीर्ति सूरिजी, पू. आ. श्री द्रोणाचार्यजी, पू. श्री राजशेखरसूरिजी, पू. आ. श्री शीलांकाचार्य. पू. आ. श्री शांतिसूरिजी म., मलधारी पू. हेमचन्द्रसूरिजी म., पू. आ. श्री हिमवन्तसूरिजी म., आदि अनेक प्राचीन-प्रामाणिक आचार्यों के कथन से और दशवैकालिक चूर्णि, हिमवन्त स्थविरावली, अंगपन्नति, पिंडनिर्युक्ति टीका, गच्छाचार पयन्ना (दोघट्टीवृत्ति), प्रबन्धकोष गुरुपट्टावली, ओघनिर्युक्ति, आचारांग टीका, उत्तराध्ययन टीका, विशेषावश्यक भाष्य-टीका, बृहत्कल्प पीठिका की टीका, गुर्वावली इत्यादि प्राचीन-प्रामाणिक शास्त्रों से तथा चन्द्रगिरि पहाड़ पर, पार्श्वनाथ बस्ती स्थित कानडी शिलालेख से भी इस तथ्य-सत्य की पुष्टि होती है कि १४ पूर्वधर श्रुतकेवली भद्रबाहु स्वामी महाराज ही निर्युक्तिकार है ।

कुछ विद्वान् वाराही संहिता नामक ग्रंथ को भद्रबाहुस्वामी म० के सगे भाई वराहमिहिर ने रचा है ऐसा उल्लेख करते है किन्तु उपर्युक्त इतिहास के परिप्रेक्ष्य में यह सत्य प्रतीत नहीं होता है । यह वराहमिहिर दूसरा है ।

इस लेख में ऐतिहासिक तथ्यों के विरुद्ध या प्राचीन शास्त्रों एवं पूर्वाचार्यों के कथन विरुद्ध कुछ भी लिखा गया हो, उसके बदले मिच्छामि दुक्कडम् । सुज्ञैः [illegible] शोध्यम् । 卐

□ □ □
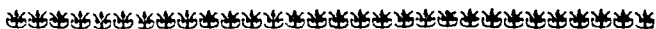
दया की दृष्टि से, परोपकार की दृष्टि से जगत के सभी जीव एक समान हैं। जिस प्रकार मनुष्य को स्वतत्रता से जीने का अधिकार है उसी प्रकार सभी प्राणियो को भी स्वतत्रता से जीने का अधिकार है।

"जीओ और जीने दो"
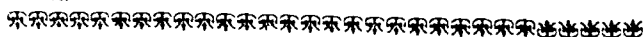
—मुनिराज श्री भाग्य शेखर विजयजी म

दीवार मे जीव नही है, फिर भी क्रोध के आवेश मे आकर दीवार को लात मारेंगे तो भी हिंसा का दोष लगेगा, तो फिर सजीव अडा खाते समय क्या कल्पना होती होगी ? जरा सोचिये ? अडा खाने वाले से कोई पूछे कि किस पक्षी का अडा है तो कहेगे कि मुर्गी का अडा है। मुर्गी के अण्डे से क्या मतलब ? क्या अडा सजीव नही होता ? मुर्गे के वीर्य के सयोग बिना अडा नही बन सकता। बाद मे उसकी प्रक्रिया कैसी भी आधुनिक हो तो भी अडा मुर्गी के पेट मे से हुआ यह बात वास्तविकता से दूर नही है।

अडा पेड पर होता है। अडा खाने वाले इस प्रकार का प्रचार करते है लेकिन यह सडा-गला झूठा मत है। अडा खाने वाले लालची यह जानते है कि अडा पक्षियो के गर्भाशय मे पैदा होता है फिर भी अडा पेड पर होता है ऐसा मानकर खाते है।

अडे का पेड किसी काल मे नही था तो फिर इस काल मे कहाँ से आया ? अडे के बीज कहाँ से आये ? क्या भगवान ने भेज दिया, ऐसा कहकर सिद्ध करोगे ? भगवान ने अडे का पेड और बीज कौन से तरीके से भेजा ? क्या भगवान भी प्रकृति के नियम के

विरुद्ध चल सकते हैं ? यदि भगवान ने अंडे का पेड़ भेजा होता तो फिर राक्षस के लिये भगवान मनुष्य का पेड़ भेजते । यदि कोई मनुष्य अंडा खाये तो उस पर खून का आरोप लागू होगा या नहीं ? गवर्नमेन्ट उसे उम्र कैद या फांसी की सजा सुनायेगी या नहीं ? कारण यह है कि अंडे का पेड़ भगवान ने भेजा है तो फिर अंडे खाने की छूट है । मनुष्य और पक्षी में क्या अन्तर है ? दोनों ही गर्भाशय में प्रवाही के रूप में वीर्य के रूप में उत्पन्न होते फिर आकार बनता है तो फिर दोनों में फर्क क्यों ? जैसे अंडे में से बच्चा विकसित होता है वैसे बालक (बच्चा) भी गर्भाशय में विकसित होता है । हाथी से लेकर चींटी तक के सभी जीव एक समान है । शरीर के भेदों के कारण गति में भिन्नता दिखाई देती है । दया की दृष्टि से, परोपकार की दृष्टि से जगत् के सभी जीव एक समान है । जिस प्रकार मनुष्य को स्वतंत्रता से जीने का अधिकार है उसी प्रकार सभी प्राणियों को भी स्वतंत्रता से जीने का अधिकार है ।

मनुष्य जिस प्रकार सुख-दुःख का अनुभव करता है उसी प्रकार प्राणी भी सुख-दुःख का अनुभव करते हैं । मनुष्य एवं प्राणी दोनों पर ही ऋतुओं का समान प्रभाव पड़ता है । मनुष्य में आहार संज्ञा, भय संज्ञा, मैथुन संज्ञा, परिग्रह संज्ञा होती है उसी तरह सभी प्राणियों में यह चार संज्ञा विद्यमान होती है ।

मनुष्य को अपने जीने एवं मनोरंजन के लिये अन्य प्राणियों का बलिदान नहीं लेना चाहिये । मनुष्य एक सबल प्राणी है सबल प्राणी को निर्बल प्राणी की रक्षा करनी चाहिये । यह मनुष्य का परम कर्तव्य एवं धर्म है । हिंसा करने के विचार या किसी की हिंसा करने से मनुष्य कदापि सुखी नहीं बन सकता ।

शेर, चीता आज मानव को क्यों मारता है ? क्योंकि मानव उसे घायल करते है इसलिये शेर, चीते के दिल में मानव के प्रति वैर-भाव उत्पन्न होता है । बदला लेने की भावना से ही शेर, चीते मानव को घायल करते हैं, मारता है तो फिर मैं मनुष्य को मारकर अपना पेट क्यों न भरूं ? हिंसा से वैर बढ़ता है और अहिंसा से वैर कम तथा शान्त होता है । अतः महानुभाव दुनिया के समस्त जीवों को जीने दो और जीयो ।

जैन धर्म एक मौलिक धर्म है । दूसरे सब धर्मों से प्रथक और स्वतन्त्र है । इस धर्म ने अन्य कोई धर्म से नकल नहीं की है । जैन और बौद्ध धर्म दोनों स्वतन्त्र धर्म हैं । इतना ही नहीं जैन धर्म बौद्ध धर्म से पुरातन भी है । यह ठीक है कि जैन धर्म और बौद्ध धर्म दोनों श्रमण परम्परा पर आधारित है ।

— जर्मनी के प्रसिद्ध विद्वान

डॉ. हर्मन जेकोबी
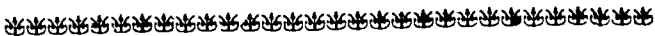
परिग्रह नरक का द्वार है। यदि हमे नरक मे नहीं जाना है तो दुराचार से धन सग्रह नहीं करें तथा सदाचार से सग्रहीत परिग्रह की भी मर्यादा करें। यह तब ही सम्भव हो सकता है जब हम हर प्रकार की सग्रहवृत्ति छोडें तथा ममत्व नहीं रखें।

आचार्य श्री हिरण्यप्रभसूरीजी म सा के प्रवचन मे बरसे

अनमोल मोती

सकलनकर्ता– श्री मनोहरमल लूनावत

न्यायाम्भोनिधि पूज्य आचार्य श्रीमद्-विजयानन्दसूरीश्वरजी (आत्मारामजी) महाराज के निष्पृह चूडामणि आचार्य विजय कमलसूरीश्वरजी म सा के प्रमुख शिष्य कविकुल किरीट व व्याख्यान वाचस्पति पदवी से विभूषित आचार्य विजय लब्धि-सूरीश्वरजी महाराज वडे ही प्रतिभाशाली आचार्य हुए हैं। उनका शास्त्र ज्ञान व तर्क शक्ति बेजोड थी जिसके कारण उन्होंने अनेक जगह शास्त्रार्थ कर जैन शासन की अपूर्व शासन प्रभावना की थी। उन्होने विशाल जैन साहित्य की रचना की थी। यही नही उनके रचित स्तवन व सज्झाय आज भी वडे चाव से गाये जाते हैं। आपके उपदेश से कई मन्दिरो का जीर्णोद्धार तथा कई मन्दिरो का नव निर्माण हुआ है।

यह आपकी ही देन है कि आपके समुदाय मे आचार्य लक्ष्मणसूरी, आचार्य विक्रमसूरी, आचार्य नवीनसूरी, आचार्य कीर्तिचन्द्रसूरी, आचार्य भद्र करसूरी आदि अनेक प्रकाण्ड विद्वान् एव महान् त्यागी तपस्वी आचार्य भगवन्त हुए है जिन्होंने गुजरात, महाराष्ट्र, राजस्थान के अलावा दक्षिण भारत मे भी जैन धर्म की ध्वजा फहराने मे बडा योगदान दिया है।

यह वडे हर्ष की बात है कि इस वर्ष जयपुर तपागच्छ सघ के प्रवल पुण्योदय से

इसी समुदाय के तपो विभूति आचार्य श्री नवीनसूरीश्वरजी महाराज के शिष्य-रत्न शान्त मूर्ति आचार्य विजय हिरण्यप्रभसूरीश्वरजी महाराज का ठाणा-३ से यहां चातुर्मास है।

आप पिछले वर्ष बम्बई के चौपाटी उपाश्रय में यशस्वी चतुर्मास कर अपने शिष्य रत्न के वर्षीतप के पारणे हेतु हस्तिनापुर तीर्थ पधारे थे। जयपुर श्रीसंघ की आग्रहभरी विनती को मान देकर आपने इस वर्ष जयपुर में चातुर्मास करने की स्वीकृति हस्तिनापुर तीर्थ में दी। आपके अधिकतर चातुर्मास गुजरात तथा महाराष्ट्र की भूमि में ही हुए है, लेकिन, मद्रास, बैंगलोर, मैसूर आदि दक्षिण भारत के महानगरों तथा कलकत्ता में भी चातुर्मास हुए है।

जयपुर नगर में प्रवेश के दिन से ही आपके प्रवचन हो रहे है। आपके प्रवचन बड़े ही मार्मिक, ज्ञानवर्धक तथा आत्मा को झकझोर देने वाले होते है। आपके प्रवचनों से कुछ अनमोल मोतियों में से कुछेक यहां उद्धृत कर रहा हूँ :—

(१) नगर प्रवेश के प्रथम दिन आत्मानन्द सभा भवन में प्रवचन करते हुए आपने फरमाया— सच्चा सुख भौतिक पदार्थों की प्राप्ति और उपभोग में नहीं अपितु आत्म सन्तोष में है। हर एक के प्रति मैत्री भाव रख कर मानव सेवा से अपने आपको समर्पित करने से सच्चा सुख, आन्तरिक शान्ति एवं दूसरों से सद्भावना प्राप्त की जा सकती है।

(२) जब तक मनुष्य राग द्वेष का परित्याग नहीं करता तब तक वह मोक्ष पाने का अधिकारी भी नहीं बन सकता। कोई कितनी ही धर्म आराधना करे लेकिन जब तक राग द्वेष का त्याग नहीं करता तब तक उसे सफलता नहीं मिलेगी। इस संदर्भ में आपने एक शास्त्रीय दृष्टान्त देकर कहा कि एक महान् विद्वान् तपस्वी साध्वीजी, जो कि ५०० साध्वियों की नायक थी तथा स्वयं भी संयम का कड़ाई से पालन करती थी तथा अपनी साध्वियों को भी कड़कता से संयम की पालना कराती थी लेकिन स्वयं छुपा कर एक रत्न रखती थी। इस रत्न में उसका इतना राग हो गया था कि वह दिन रात उसमें ही लीन रहती थी जिसके फलस्वरुप इतनी ज्ञानी ध्यानी होने पर भी वह काल धर्म पाने पर छिपकली बनी। अतः राग और द्वेष पर विजय पाना चाहिए।

(३) एकेन्द्रिय, बेइन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चउरिन्द्रिय में अनेक जन्म धारण करने के बाद हमारे प्रबल पुण्योदय से हमें मनुष्य जन्म मिलता है। मनुष्य जन्म पाने हेतु देवता भी प्रतीक्षा करते है क्योंकि उन्हें विरती का उदय नहीं होता है। सच पूछिये तो मनुष्य जन्म में ही ऐसी शक्ति है कि हम त्याग तपस्या व संयमी जीवन जीकर मोक्ष की प्राप्ति कर सकते है। लेकिन हमने इसका महत्व नहीं समझा। हम तो भौतिक सुख साधनों की प्राप्ति में तथा पैसा कमाने की धुन में इतने डूब गये कि हमें आज देव गुरु धर्म के प्रति कोई राग नहीं रहा। यही कारण है कि दिनोंदिन हम लोग सामायिक, प्रतिक्रमण, पौषध, पूजा करने वालों की संख्या कम हो रही है। हमने इस पर कभी विचार नहीं किया कि मनुष्य जन्म के मिलने पर हमें जैन धर्म भी मिला है, जिसका मिलना बड़ा दुर्लभ है। याद रखो कि हम केवल धर्म की आराधना करते जाते है

और कोई सहायता करने वाला नही है। अत प्रतिदिन अधिकाधिक धर्म आराधना कर अपना जन्म सफल बनावे। नव कारसी का पच्छक्खान करे, रात्रि भोजन का त्याग करे, सामायिक प्रतिक्रमण, पौषध, देवाधिदेव की पूजा करे तथा पर्व के दिनो मे उपवास या आयम्बिल करें।

(४) जैन धर्म मे दूज, पचमी, अष्टमी, ग्यारस एव चतुर्दशी तिथियो का बडा महत्त्व है क्योकि शास्त्रीय मान्यता अनुसार इन दिनो आयुष्यबन्द होने की अधिक सम्भावना होती है। इसी कारण जैनधर्मी श्रावक श्राविकाये इन दिनो उपवास तथा पौषध करते है तथा हरी सब्जी का त्याग करते हैं लेकिन क्रोध, मान, माया तथा लोभ का इन दिनो मे भी त्याग नही करते जो अधिक भयकर हैं। यदि इन तिथियो के दिन इनके कारण किसी की मृत्यु हो गई तो उनकी बडी दुर्गति होगी। अत प्रत्येक श्रावक श्राविकाओ को इन तिथियो को क्रोध, मान, माया और लोभ का त्याग भी करना चाहिए तभी उनका जीवन फलीभूत होगा। हम आज कल पाश्चात्य सस्कृति मे इतने रग गये हैं कि हमे इन पवित्र तिथियो का ज्ञान ही नही रहता। हमे तो अग्रेजी तारीख ही हमेशा याद रहती है। यही नही हम हमेशा रविवार को ही सभी शुभ कार्य करना चाहते है जब कि रविवार इसाइयो का पवित्र दिन माना जाता है। इस प्रकार हम हमारी जैन सस्कृति से दूर भाग रहे हैं जो अच्छा नही है।

(५) आज चारो ओर लोग पैसा कमाने हेतु बडी बडी चोरी, जालसाजी, मिलावट तथा जो न करने योग्य व्यवसाय है वह भी करने मे नही चूकते। उन्हे यह भान नही कि हम जैन है अत हमे न्याय व नीति से पैसा कमाना चाहिए और वह भी इतना कि जिससे अपना तथा अपने परिवार का अच्छी तरह से निर्वाह हो सके। लेकिन आज तो पैसा कमाने की होड लगी हुई है। लखपति करोडपति और करोडपति अरबपति बनना चाहता है। क्या इसी प्रकार का परिग्रह बढा कर सुखी जीवन जीना चाहते हैं लेकिन याद रहे इससे हम कदापि सुखी नही बन सकते बल्कि हम अशान्ति को निमत्रण दे रहे है।

आपने परिग्रह की उपमा अपने मकान मे पडे हुए एक मरे चूहे से देते हुए कहा कि क्या उसे हम वहा से हटाना नही चाहेंगे? उसी प्रकार हमे भी परिग्रह के बढने पर अपना मन धर्म मार्ग तथा शुभ कार्यो मे लगा देना चाहिए क्योकि परिग्रह नरक का द्वार है। भगवान महावीर ने भी गौतम स्वामी के यह पूछने पर कि किन-किन कारणो से लोग नरक मे जाते हैं तो अनेक कारण बताते हुए परिग्रह को भी एक कारण बताया है। अत यदि हमे नरक मे नही जाना है तो दुराचार से धन सग्रह नही करें तथा सदाचार से सगृहीत परिग्रह की भी मर्यादा करें। यह तब ही सम्भव हो सकता है जब हम हर प्रकार की सग्रहवृत्ति छोडें तथा ममत्व नही रखे।

—ꕥ—

फिर ये विभक्त किस प्रकार हो गये हैं। दोनो ही सघो का इतिहास इस मामले मे चुप है। लगता है अधिक पुराने विचार वाले साधु "जिनकल्प" मे विश्वास करते और नये विचार वाले "स्थीवर कल्प" मे। जिनकल्प का तात्पर्य नग्न रहने मे है जबकि स्थीवर कल्प का वस्त्र धारण करने से।

दिगम्बर और श्वेताम्बरो के इस विषय मे अपने-अपने विचार हैं।

श्वेताम्बरो के अनुसार एक शिवभूति नामक सेनापति था जिसने अपने राज्य के लिए कई युद्ध जीते और राज्य मे उसे सम्मानित किया। इससे शिवभूति को गर्व हो गया तथा वो गर्व मे देर से घर आने लगा। उसकी पत्नी की शिकायत पर शिवभूति की मा ने एक दिन दरवाजा खोलने से मना कर दिया और उस जगह जाने को कहा जहाँ का दरवाजा उसे खुला मिले। शिवभूति क्रुद्ध होकर एक ऐसे स्थान पर चला गया जो स्थानक था। उसने स्थानक के आचार्य को दीक्षा देने के लिए निवेदन किया पर उन्होंने इन्कार कर दिया। इस पर शिवभूति ने अपने बालो का लोचन कर लिया और साधु की तरह घूमने लगा। घूमते घूमते एक बार वह पुन राजधानी लौटा, जहाँ उसके मित्र राजा ने एक रत्न सहित वस्त्र भेंट स्वरूप भेजा। शिवभूति के वरिष्ठ साधुओ ने उसे यह वस्त्र प्रयोग मे लेने की अनुमति नहीं दी। परन्तु शिवभूति ने उनकी एक न सुनी। इस पर उसके गुरु ने उस वस्त्र को चीर डाला और उसकी दरी बना दी। इस पर शिवभूति ने उग्र होकर सारे वस्त्र ही उतार दिये।

इससे थोडी भिन्न एक कथा और भी है जिसमे कहा गया है कि एक दिन शिवभूति को उसके गुरु प्रवचन दे रहे थे। उन्होंने बतलाया कि जिन कल्पिया दो प्रकार के होते हैं—एक वो जिनके पास आवश्यक सामग्री रहती है दूसरे वे जिनके पास कुछ भी नही रहता। इस पर शिवभूति न गुरु से पूछा कि जब जिनकल्प की प्रणाली का प्रावधान है तो वस्त्रो का बन्धन क्यो? जो साधु जिनकल्प की पालना करता है, अकेला रहता है, उसको सिद्धान्तत नग्न रहना चाहिये। गुरु ने उसे बहुत समझाया पर वो नहीं माना और सारे वस्त्र उतार फेंके। इस प्रकार वीर सम्वत् 609 तदनुसार सन् 83 ईस्वी मे दोनो सघ अलग अलग हो गये।

दिगम्बर मत के अनुसार चन्द्रगुप्त मौर्य के समय मे भद्रबाहु स्वामी ने भविष्यवाणी की थी कि मगध मे 12 वर्ष का भयकर अकाल पडेगा। इसलिये जैन सघ का एक भाग भद्रबाहु के नेतृत्व मे दक्षिण भारत चला गया था जबकि दूसरा भाग मगध मे रह गया। कुछ समय बाद जब सघ के नेता उज्जयनी मे मिले, तब भी अकाल चल रहा था। तब उन्होंने साधुओं को थोडा सा वस्त्र पहिनने की अनुमति दे दी ताकि वे भिक्षा माँगने जा सकें। अकाल के समाप्त होने पर भी इन साधुओ ने वस्त्र का उपयोग नही छोडा। पुरातन पथियो ने इसका विरोध किया और इस प्रकार सघ दो भागो मे विभक्त हो गया। वस्त्र धारण करने वाले अर्द्धफलक श्वेताम्बर सघ के प्रारम्भिक साधु बने। अतिम जुदाई वल्लभीपुर के राजा लोकपाल की रानी चन्द्रलेखा के कारण हुई। एक बार उसने इन अर्द्धफलक साधुओ को आमन्त्रित किया परन्तु वे अर्द्धनग्न थे इसलिए राजा उन्हें देखकर बडा निराश हुआ। इस पर रानी ने उन्हें पूर्ण वस्त्र धारण करने के आदेश दिये। इस पर अर्द्धफलक साधुओ ने वस्त्र धारण किये और वे श्वेताम्बर हो गये। यह घटना ईसवी सन् 80 की है।

इस प्रकार महावीर के निर्वाण के करीब 600 वर्षों बाद श्वेताम्बर और दिगम्बर दोनो अलग-अलग शाखाओ मे बँट गये।

अब देखना यह है कि पिछले 1900 वर्षों मे इन दोनो सघो मे क्या फर्क आया है? इनकी मान्यताओ मे क्या अन्तर है? श्री ए के राय ने

अपनी पुस्तक "A History of Jainas" में 18 बिन्दुओं पर दोनों संघों में अन्तर बतलाया है ।

दिगम्बरों को श्वेताम्बरों की निम्न मान्यतायें स्वीकार नहीं है :—

1. कि केवली को भोजन की आवश्यकता है ।
2. कि केवली को निवृत होने की आवश्यकता है।
3. कि स्त्रियां भी मोक्ष प्राप्त कर सकती हैं ।
4. कि शूद्र भी मोक्ष प्राप्त कर सकते हैं ।
5. कि बिना वस्त्रों के त्याग किए भी निर्वाण की प्राप्ति हो सकती है ।
6. कि गृहस्थ भी मोक्ष प्राप्त कर सकता है ।
7. कि वस्त्रालंकार युक्त मूर्तियों की पूजा की जा सकती है ।
8. कि साधु 14 वस्तुओं को रख सकते हैं ।
9. कि तीर्थंकर मल्लीनाथजी एक स्त्री थे ।
10. कि 12 अंगों में से 11 अंग अब भी विद्यमान है ।
11. कि भरतचक्रवर्ती को महलों में निवास करते हुए भी केवल ज्ञान हो गया था ।
12. कि साधु गृह से भी भोजन ग्रहण कर सकता है ।
13. कि महावीर का भ्रूण एक गर्भ से दूसरे गर्भ में स्थानान्तरित किया गया था । महावीर की माता को 14 शुभ सपने आये थे । दिगम्बर मत के अनुसार आगम में 16 शुभ स्वप्न दिये थे ।
14. कि महावीर गोशालक की तेजोलेश्या से रुग्ण हो गये थे ।
15. कि महावीर का विवाह हुआ था और उनकी एक पुत्री भी थी ।
16. कि देवताओं ने एक वस्त्र महावीर को भेंट किया था जो उन्होंने कंधे पर [illegible] था ।
17. कि मरु देवी हाथी पर बैठकर, निर्वाण के लिये गई थी ।
18. कि साधु कई घरों से अपनी भिक्षा प्राप्त कर सकता है ।

इन मतभेदों को देखकर क्या यह नहीं लगता कि ये इतने छोटे मामले है जिनके लिये कोई समाज इतना रूठ जाये कि वो एक साथ उठ-बैठ तक न सके । ऐसा लड़े कि जैसे एक दूसरे के जानी दुश्मन हों । इस लड़ाई में इतनी गिरावट आ गई कि जो कुछ महावीर ने सिखलाया उसके मूल पाठ को ही भूल जाये । क्या हम एक-एक बिन्दु पर विचार कर इनको सुलझा नहीं सकते और यदि न सुलझे तो क्या हम इस बात पर एकमत नहीं हो सकते कि इन मुद्दों पर फर्क है तो रहने दो । बाकी मुद्दों पर एकता कर लेते है । यदि मूल सिद्धान्तो पर एकता हो तो ये फर्क तो फिर फर्क रह ही नहीं जाते ।

क्या जैन समाज एक बार फिर से इन सारे मुद्दों पर विचार करेगा । क्या जैन समाज के साधु-सन्त अग्रणी नेता और प्रभावशाली व्यक्ति एकबार यह प्रयास करेंगे कि समाज एक सूत्र में पिरोया जाये ताकि जैन धर्म का प्रचार प्रसार हो सके और इसके सिद्धान्तों द्वारा मानव जाति का कल्याण हो सके ।

क्या हम आज अपने कर्तव्य को भुला देंगे और हमारी आनेवाली पीढ़ियों के सामने दोषी बनकर खड़ा होना चाहेंगे ? हमारे सामने आज सवाल है कि हम अपने धर्म और जाति को बचायें और सही मार्गदर्शन दें ।

(नोट :-यह लेख मैंने कुछ उपलब्ध पुस्तकों के आधार पर लिखा है इसमें यदि त्रुटियाँ है तो विज्ञ पाठक मुझे क्षमा करेंगे और सही सूचना देकर [illegible] ।)
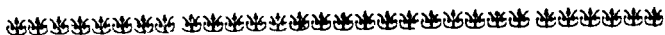
हे जीव ! हे आत्मन् ! हे चेतन ! ध्यान से सुनो ! अनादि काल की यही रीति है कि मैं आपके पास नही चलती । आपको अकेले ही अपनी करनी का फल भोगने जाना पडता है । ससार मे केवल एक ही सारभूत वस्तु है और वह है जिनवर का नाम । प्रभुवर भक्ति—

मैं न चलूँगी तोरे संग चेतन

● श्री धनरूपमल नागोरी
एम ए, बी एड, साहित्यरत्न, न्यायमध्यमा

आध्यात्म योगी आनन्दघन जी के पद एव स्तवन आदि जो भी उपलब्ध हैं, बडे मार्मिक और प्रभावशाली हैं । हृदय के अन्तर्पट को स्पर्श करनेवाले है। उन्होने थोडे मे बहुत दिया, गागर मे सागर भर दिया । उन्ही का यह पद है जिस पर विवेचन किया जा रहा है। यह चेतन और काया के बीच का रोचक एव मार्मिक सवाद है ।

आत्माराम, काया से निवेदन कर रहे हैं । कह रहे हैं कि 'हे काया (शरीर) हमारे साथ चलो, क्योकि मैंने तुझे बहुत यत्नपूर्वक, कष्ट पाकर भी बहुत आराम से रक्खा । तेरे लिये नाना प्रकार के कष्टो की परवाह नही की और तुझे सुख पहुँचाने मे कोई कसर नही रक्खी । इसलिये हे काया ! मैं चाहता हूँ कि आप परभव मे मेरे साथ चलो । और भी—

तोये कारण मैं जीव सहारे, बोले झूठ अपारे,
चोरी कर परनारी सेवी, झूठ परिग्रह धारे ।।

हे काया ! तेरे कारण मैंने कई जीवो को मारा । ताडना, तर्जना की । उन्हे दु खी किया । नाना प्रकार का झूठ बोला, प्रपच किया, लोगो को ठगा, धोखा दिया, चोरी की, दूसरो का धन चुराया, अपहरण किया,

दूसरों की स्त्रियों का सेवन कर महापाप किया, नाना प्रकार का परिग्रह धारण किया, ब्रह्मचर्य का पालन नहीं किया। केवल तुझे सुखी करने के लिये ढेर सारे अकार्य किये। जब मैंने तेरे लिये इतने अकृत्य किये तो काया अब हमारे संग चलो।

आतमचंद—और भी विशेष रूप से कह रहे हैं, और आग्रह भी कर रहे हैं कि हे काया !

पर आभूषण सुंघाचूआ,
अशन पान नित्य न्यारे,
फेर दिन षट रस तोये सुन्दर,
ते सब मल कर डारे ॥

तुझे कई प्रकार के आभूषणों से सज्जित किया। तेरी सुन्दरता बढ़े उसके लिये सुन्दर-सुन्दर वस्त्राभूषण लाया और तुझे धारण कराया। विविध प्रकार के पेय तुझे पिलाये। बहुत प्रकार के स्वादिष्ट पकवान तुझे खिलाये। कई प्रकार के फलों का सेवन कराया ताकि तू कमजोर न हो जाय। हृष्ट पुष्ट बनी रहे। षटरस भोजन तुझे कराये जिनका मल बनाकर तूने डाल दिया। तुझे स्वस्थ रखने के लिये मैंने तुझे सब प्रकार के पौष्टिक पदार्थ बदाम, पिस्ता, मेवे आदि का सेवन भी कराया। हे काया ! क्या कहूं। मैंने अपने लिये नहीं, सब कुछ तेरे लिये किया। कई प्रकार के अन्याय, अत्याचार व अनाचार केवल तेरे हितार्थ किये, तुझे प्रसन्न रखने के लिये मैंने ये सब कुछ किया अब हे मेरी काया ! अब तो हमारे साथ चलने की तैयारी करो। मेरी इतनी सी बात मान लो। एक बार तो साथ चली चलो। आगे फिर कभी मत चलना। केवल एक बार ! बस। इतनी सी बात।

काया ने आत्माराम जी की सब बातें, मधुर, मनभावनी बातें बड़े ध्यान से सुनी। विचार किया। लेकिन उन बातों के चक्कर में नहीं आई। उसने जो जवाब दिया उससे आत्माराम जी की आंखें खुल गई। काया कहती है—

जीव सुणो या रीत अनादि,
कहा कहत बारे बारे,
मैं न चलूगी संग तोरे चेतन,
पाप पुण्य दोय लारे ॥

अर्थात् हे जीव ! हे आत्मन् ! हे चेतन ! ध्यान से सुनो। इसी में सार है, शेष सब निस्सार है। हे चेतन ! अनादि काल की यही रीति है कि मैं आपके साथ नहीं चलती। आपको अकेले ही अपनी करनी का फल भोगने जाना पड़ता है, तो फिर आप मुझे बार-बार साथ में चलने को क्यों कह रहे है। हे राजन् ! मैं आपके साथ बिलकुल नहीं चलूंगी। भले ही आप कितना कुछ मेरे लिये करलें, मैं अनादि काल की रीत नहीं तोड़ूगी, आपके साथ नहीं चलूगी। मुझे धर्मशाला में मेरी सम्मन थोड़ी ही कहानी है। मेरा और आपका क्या साथ ? आप चेतन, ज्ञानवान, समझदार और मैं कोरी जड़ अचेतन। आप अविनाशी। मैं क्षणिक रूप। कहाँ आप ? कहाँ मैं ? कोई मेल ही नहीं। मैं तो केवल आपको लिया करके रैन बसेरे में स्थान देती हूँ। अब आप कुछ भी करें, मेरा उससे क्या वास्ता। क्या ऐसा हुआ। आपके साथ तो आपके किये शुभाशुभ, पुण्य और पाप दोनों साथ जायेंगे। मैं तो

चलू ? मेरे घर तो मिट्टी है। आप जब जायेंगे तो मैं अपने घर चली जाऊगी। आप अलग मैं अलग। आपका मार्ग अलग और मेरा रास्ता अलग। इस अलगाव मे मिलाव कैसे हो ?

जब काया का टका सा जवाब सुना तो चेतनराज विचार मग्न हो गये। सोचने लगे अरे ! मैं कितना अँधेरे मे रहा। जीवन भर जिसे अपना समझ कर खिलाया, पिलाया, सजाया धजाया, नहलाया, धुलाया, पोषित किया उसी ने अतिम समय का साथ नही निभाया। मुझे अकेला छोड दिया और अकेला छोडकर चली गई। एक क्षण भर के लिये भी मेरे साथ नही चली। इधर मेरा अतिम श्वास पूरा हुआ और उधर वह रफू हो गई। मेरी काया कितनी स्वार्थी। मुझे छोडते हुए उसे जरा सा भी विचार नही आया ? अरे ! जब मेरी काया, मेरा शरीर भी मेरा नही तो दूसरो की तो आस ही क्या करे ?

इसलिये योगीराज आतमराम को चिंतित देखकर उद्‌बोधित करते हुए कह रहे है—

जिनवर नाम सार भज आतम,
कहा भरम ससारे,
सुगुरु वचन प्रतीत भये तब,
आनदघन उपकारे ॥

रे आतम ! ससार मे केवल एक ही सारभूत वस्तु है और वह है जिनवर का नाम। प्रभुवर भक्ति। इसलिये निरर्थक भ्रम को, मोहमाया जजाल को तू छोड दे। त्याग दे। केवल उनका भजन कर। सुगुरु के वचन सुनकर अब आतमाराम को अपनी प्रतीति हो गई तो वह अपने मे झूम गया। उसे अपना बोध हो गया। वह सुगुरु के उपकार से अभिभूत हो गया।

बन्धुओ ! अनादि अनन्त काल से यही जड चेतन का भ्रम विभेद हमे खाये जा रहा है। ऊँचा नही उठने दे रहा है। पर्व के दिन आ रहे है। इस जड चेतन के भेद को समझ कर हम अपना आतम कल्याण कर। बस ! यही भावना।

श्री सुमतिनाथ स्वामी जिनालय मे वर्ष भर के लिए पूजा सामग्री भेंटकर्ताओ की नामावली

१ अखण्ड ज्योति (घृत)	—मगलचन्द ग्रुप
२ पक्षाल सामग्री	—श्रीमती पदमा विमलकान्त देसाई
३ बरास	—कोचर परिवार
४ चदन	—शाह कल्याणमलजी किस्तूरमलजी शाह
५ केसर	—श्री महेन्द्रसिहजी श्रीचन्दजी डागा
६ पुष्प	—श्री राकेशकुमार जी पारख
७ अगरचना (वर्क)	—श्री खेमराज जी पालरेचा
८ अगरबत्ती	—गुप्त हस्ते श्रीमती मोहनीदेवी पोरवाल
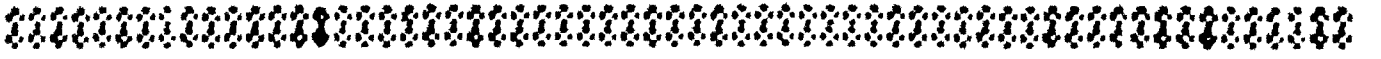
और विषय कषाय वाला मन अशुभ कर्म का उपार्जन करता है। सत्य वचन शुभ कर्म का कारण है और असत्य वचन अशुभ कर्म का कारण है। अपरिग्रह से शुभ कर्म का बन्धन होता है और आरम्भ-समारभ से अशुभ कर्म का बधन होता है। सामान्यतया, चार कषाय, पाँच इन्द्रियो के २३ विषय, १५ योग (चार मन के, चार वचन के और सात काया के) पाँच मिथ्यात्व तथा आर्त्त और रौद्र ध्यान अशुभ कर्म बधन के कारण है, और शुभ कर्म के बधन के कारण दान, शील, तप आदि हैं।

आश्रव के मूल दो भेद हैं (१) सापरायिक अर्थात सकषाय आश्रव (२) इर्यापथ अर्थात् अकषाय आश्रव। इर्यापथ आश्रव की स्थिति एक समय मात्र की होती है। अत उसके भेदो के वर्णन की आवश्यकता नही बताई गई है। अत **सापरायिक आश्रव के निम्न ४२ भेद** बताए गए हैं —

पांच अव्रताश्रव (१) प्राणातिपात (२) मृषावाद (३) अदत्तादान (४) मैथुन (५) परिग्रह का त्याग न करना। **चार कषाय आश्रव**—(१) क्रोध (२) मान (३) माया (४) लोभ करना। **पाँच इन्द्रियाश्रव**—पाँचो इन्द्रियो को नियन्त्रण मे नही रखना। **तीन योगाश्रव**—(१) मन (२) वचन (३) काया के योगो को भोग आदि विषयो मे जाने से न रोकना। **पच्चीस क्रियाश्रव**—(१) **कायिकि क्रिया**—शरीर को उपयोग रक्खे बिना कार्यशील होने देना (२) **अधिकरणी क्रिया**—शस्त्रो से जीवो की हिंसा करना (३) **प्राद्वेषिकी क्रिया**—जीव और अजीव पर द्वेष भाव से बुरे विचार करना (४) **परिताप की क्रिया**—ऐसा कार्य करना जिससे स्वय को अथवा अन्य को दु ख हो (५) **प्राणातिपात की क्रिया**—प्राणियो को मारना या मरवाना (६) **आरभ की क्रिया**—कृषि-प्रमुख क्रिया करना या करवाना (७) **परिग्रह की क्रिया**—धन-धान्य आदि नौ प्रकार के परिग्रह पर ममत्व भाव रखना (८) **माया प्रत्यय की क्रिया**—छल-कपट करके किसी को ठगना (९) **मिथ्यादर्शन प्रत्ययि की क्रिया**—सन्मार्ग पर श्रद्धा न रखना एव असत्य मार्ग का आलवन करना (१०) **अप्रत्याख्यान की क्रिया**—अभक्ष्य खाद्य एव पेय पदार्थों को उपयोग मे न लेने का नियम न लेना (११) **दृष्टि की क्रिया**—सुन्दर वस्तु पर राग रखना (१२) **पृष्टि की क्रिया**—राग से स्त्री, हाथी, घोडे आदि सुकुमाल वस्तुओ का स्पर्श करना (१३) **प्रातित्य की क्रिया**—अन्यो की रिद्धि, समृद्धि देखकर ईर्ष्या करना। (१४) **सामन्तोपनिपात की क्रिया**—स्वय की प्रशसा मे प्रसन्न होना। (१५) **नैशस्त्र की क्रिया**—यत्र, शस्त्र बनाना या बनवाना अथवा बावडी, कुआ, तालाब आदि खुदवाना। (१६) **स्वहस्त की क्रिया**—स्वय अथवा अन्य द्वारा खरगोश इत्यादि कोमल जीवो को मारना या मरवाना (१७) **आनयन की क्रिया**—किसी जीव या अजीव के पाप-मय प्रयोग से कोई वस्तु प्राप्त करना। (१८) **विदारण की क्रिया**—जीव या अजीव का छेदन-भेदन करना। (१९) **अनाभोग की क्रिया**—उपयोग बिना वस्तु लेना-रखना, उठना-बैठना, चलना-फिरना, खाना-पीना, सोना इत्यादि (२०) **अनवकाक्षा प्रत्यय की क्रिया**—इस लोक या परलोक के विरुद्ध कार्य करना (२१) **प्रायोग की क्रिया**—मन, वचन, काया सम्बन्धी खराब ध्यान मे प्रवृत्ति करना। (२२) **समुदान की क्रिया**—ऐसा क्रूर कार्य करना जिससे ज्ञानावरणीय

आदि आठों कर्मो का बन्धन एक साथ हो जैसे सिनेमा, टी.वी. आदि देखना अथवा युद्ध करना । (२३) **प्रेम की क्रिया**—ऐसे वचन बोलना जिनसे अत्यन्त राग अथवा प्रेम हो । (२४) **द्वेष की क्रिया**—क्रोध अथवा मान से ऐसे वचन बोलना जिससे अन्य को द्वेष उत्पन्न हो । (२५) **ईर्यापथि की क्रिया**—प्रमाद-रहित, मोह विजेता मुनि भगवंत एवं केवली भगवंत को गमनागमन से जो क्रिया लगे ।

आठ कर्मो से निम्न प्रकार आश्रव होता है:—

(१) **ज्ञानावरणीय कर्म से**—मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान, मनः पर्यायज्ञान और केवलज्ञान की या इन ज्ञान वालों की, अर्थात् ज्ञानियों की, ज्ञान के उपकरणों की आशातना करना, उनके लिए बुरा चिंतन करना, जिनसे शिक्षा प्राप्त की हो उनका नाम छिपाना, पदार्थ जानते हुए भी उसको छिपाना, ज्ञान एवं ज्ञान उपकरणों का नाश करना, उनके प्रति अरुचि रखना, ज्ञान का अभ्यास करने वालों को जो अन्न, वस्त्र, रहने का स्थान आदि मिलते हों उनमें अन्तराय करना, पढ़ने वालों को अन्य कार्य में लगाना, विकथा में लगाना, पण्डितों पर कलंक लगाना, उन पर उपसर्ग करना, असमय स्वाध्याय करना, ज्ञान के उपकरण समीप रखकर आहार, निहार, कुचेष्टा, मैथुन आदि करना, ज्ञान के पैर लगाना, उसके थूक लगाना, उसको खाना आदि ।

(२) **दर्शनावरणीय कर्म**—साधु-महात्मा के बारे में प्रतिकूल चिन्तन करना, शास्त्रों का अपमान करना आदि ।

(३) **वेदनीय कर्म**—इसके दो भेद हैं (१) सातावेदनीय कर्म—देव गुरु [illegible] सेवा, सुपात्र दान, दया, क्षमा, सराग-संयम, देश संयम, अकाम निर्जरा, अंतःकरण शुद्धि, बाल तप (अज्ञान कष्ट) इनके उदय से सुख का अनुभव होता है । (२) असाता वेदनीय कर्म—दुःख, शोक, वध, ताप, विलाप, रुदन करना या करवाना । इसके उदय से दुःख का अनुभव होता है ।

(४) **मोहनीय कर्म**—वीतराग, शास्त्र, संघ, धर्म की बुराई करना या उनके बारे में मिथ्यात्व का परिणाम रखना, सर्वज्ञ, मोक्ष, देव इत्यादि के बारे में मानना कि वे होते ही नहीं, धार्मिक व्यक्तियों के दोष निकालना, उन्मार्ग भेद ऐसा उपदेश देना, अनर्थ में आग्रह करना, असंयमी की पूजा करना, देव, गुरु, धर्म का अपमान करना, इत्यादि **दर्शन मोहनीय कर्म** के आश्रव हैं । यह मोहनीय कर्म का पहला भेद है ।

मोहनीय कर्म का दूसरा भेद **चारित्र मोहनीय कर्म** है जिसके भी दो भेद हैं— (१) **कषाय चारित्र मोहनीय**—क्रोध, मान, माया और लोभ आदि के उदय से आत्मा का अत्यन्त कषाययुक्त परिणाम होना कषाय चारित्र मोहनीय का आश्रव है । (२) **नो कषाय चारित्र मोहनीय**—इसके नौ आश्रव है (i) **हास्य**—बहुत हँसना, कामदेव संबंधी मजाक करना, मजाक उड़ाने का स्वभाव, अत्यन्त बकवास करना, [illegible] वचन बोलना आदि (ii) **रति**—विविध देशों को देखने की भारी इच्छा रखना, नाच, नौटंक, नाटक इत्यादि खेलों में मन लगाना आदि (iii) **अरति**—अपने से अधिक बुद्धिमान तथा धनवान की ईर्ष्या करना, गुणीजनों के गुणों में से दोष निकालना, पाप करने का स्वभाव रखना, दूसरों के सुख का नाश करना, दूसरों के दुःख में सुख मानना आदि

(iv) शोक—दूसरो को शोक उत्पन्न करना, स्वय शोक करना और उसी विचार मे रोना इत्यादि (v) भय—स्वय भयभीत होना, दूसरो को भयभीत करना, दु ख देना, निर्दयता करना आदि (vi) जुगुप्सा—साधु-साध्वी, श्रावक-श्राविकारूपी चतुर्विध सघ की खिलाफत करना, निन्दा करना और उनके सदाचार की विशेष निंदा करना एव उनसे घृणा करना। (vii) स्त्रीवेद—विषय मे आसक्ति, मृषावाद, अति कुटिलता तथा पर स्त्री मे आसक्ति (viii) पुरुषवेद—स्वदारा मात्र से सतोष, ईर्ष्या नही रखना, कषाय की मदता, सरल आचार और स्वभाव आदि (ix) नपु सक वेद—स्त्री और पुरुष सबधी काम सेवन मे अत्यन्त अभिलाषा, तीव्र कामुकता, धोखेबाजी, व्रतो को बलात्कार से तोडना आदि।

सामान्य चारित्र मोहनीय कर्म के आश्रव निम्न हैं—मुनियो की निंदा, धर्मीजनो के धर्म पालन मे विघ्न करना, व्यसनियो की प्रशसा करना, श्रावक के बारह व्रत पालने मे बाधा उत्पन्न करना, अचारित्री की प्रशसा करना, चारित्र का दोष निकालना और कहना कि साधु होने मे कोई लाभ नही, श्रावक धर्म ज्यादा अच्छा है, कषाय और नो कषाय उत्पन्न हो ऐसे कार्य करना।

(५) **आयुष्य कर्म**—इसके चार भेद है (i) **नर्क आयु के आश्रव**—पचेन्द्रिय जीवो का वध, अत्यन्त आरभ, अत्यन्त परिग्रह, ममता, मांस मदिरा, मक्खन शहद का भक्षण, वैरभाव, रौद्र ध्यान, मिथ्यात्व भाव, कषाय, झूठ बोलना, चोरी करना, मैथुन मे आसक्ति, इन्द्रियो को वश मे न रखना आदि (ii) **तिर्यच आयु के आश्रव**—उन्मार्ग का उपदेश देना, सुमार्ग पर न चलना, आर्त-ध्यान, शल्य सहित पाया, आरम्भ, परिग्रह, अतिचार सहित शीलव्रत, व्रत-नियमो मे न रहना, कषाय आदि (iii) **मनुष्य आयु के आश्रव**—अल्प आरम्भ, अल्प परिग्रह, मृदुता सरलता, धर्मध्यान के प्रति राग, अकषाय, मध्यम परिणाम, सुपात्र दान, देव गुरु की पूजा, उनके उपदेशो का पालन, मीठा और प्रिय बोलना, शातिपूर्वक प्रश्न पूछना, पर के दु खो को दूर करना, लोक व्यवहार मे मध्यस्थता आदि (iv) **देव आयुष्य के आश्रव**—सयम, निर्जरा, अच्छे मित्रो का सयोग, धर्म तत्त्व सुनना, दान, तप, श्रद्धा, ज्ञान, दर्शन चारित्र की आराधना इत्यादि।

(६) **नाम कर्म**—इसके तीन भेद हैं—(i) **अशुभ नाम कर्म** के आश्रव—किसी को ठगना, कपट करना, मिथ्यात्व भाव, चुगली खाना, चित्त की चचलता, झूठी गवाही देना, प्राणियो के अगोपाग छेदना, झूठे नाप, झूठे तोल काम मे लेना, निंदा करना, स्व प्रशसा करना, हिंसा, झूठ, चोरी, अब्रह्म, महारभ, परिग्रह, कठोर एव बुरे वचन, फालतू बोलना, अपमान करना, मजाक उडाना, अत्यत कषाय, देवालय, उपाश्रय, धर्मशाला, देवमूर्ति इत्यादि का नाश करना, अगारादि पन्द्रह कर्म करना इत्यादि। (ii) **शुभ नाम कर्म आश्रव**—उपरोक्त दुष्परिणामो से विपरीत परिणाम, प्रमाद से दूर रहना, सद्‌भाव रखना, गुणीजनो एव धार्मिक पुरुषो का गुणगान इत्यादि (iii) **तीर्थंकर नाम कर्म के आश्रव**—पच परमेष्ठियो की भक्ति, सघ की भक्ति, तपस्वियो की भक्ति, ज्ञान की आराधना, प्रतिक्रमण करना, व्रत-नियम पालना, विनय भाव रखना, आत्म कल्याण के लिए ज्ञान प्राप्त करना, बारह प्रकार के तप करना, सयम पालना और पलवाना, आत्म-स्वरूप का चिन्तन करना, जैन धर्म

की पवित्रता, प्राचीनता का उपदेश देना, दान देना इत्यादि बीस स्थानकों की आराधना करना।

(७) **गोत्र कर्म**—इसके दो भेद हैं—
(i) **नीच गोत्र के आश्रव**—पर निन्दा, मजाक उड़ाना, किसी के गुणों का वर्णन नहीं करना, किसी के दोष बताना, स्व-प्रशंसा करना, अपने दोष न बताना, जाति आदि आठ प्रकार के मद करना आदि।
(ii) **उच्च गोत्र के आश्रव**—उपरोक्त गुणों से विपरीत आचरण करना, गर्व न करना, विनय करना इत्यादि।

(८) **अंतराय कर्म** के आश्रव—दान में, लाभ में, भोग में, उपभोग में, वीर्य में अंतराय करना।

शुभ आश्रवों का आलंबन करने और अशुभ आश्रवों का त्याग करने से संसार से छुटकारा प्राप्त हो सकता है और कालान्तर में उत्तरोत्तर उच्च गुण स्थानक प्राप्त करने से मोक्ष की प्राप्ति हो सकती है जो मनुष्य-जन्म का एक मात्र ध्येय है।

—B-61, मेटी कॉलोनी, जयपुर
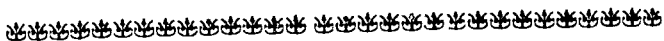
मनुष्य जन्म से नही कर्म से महान् वनता है ।
—भगवान महावीर

प्रवचन सुनने के वाद राजा ने अपने लडके का पूर्व भव के बारे मे पूछा तब मुनिराज ने राजकुमार का पूर्व भव बतलाया । राजा अचम्भे मे पड गया और वह मुनिराज से कुछ नियम लेकर अपने महलो मे चला गया ।

कर्मों से बचो

● वावू श्री मानकचन्द कोचर

इसी भारत क्षेत्र मे रत्नपुरी नाम की विशाल नगरी थी । उस नगरी मे प्रताप सैन नाम का राजा राज करता था । उमके राज्य की सीमायें दूर-दूर तक फैली हुई थी । अनेक जैन देरासर व उपाश्रय थे । प्रजा सुख शान्ति से अपना जीवन व्यतीत कर रही थी । उसी नगरी के एक गाँव मे एक माँ वेटे पिता समेत एक परिवार वहा निवास करते थे । पिता राजा के वहा वागवान का कार्य करता था तथा लडके की माँ छोटा-मोटा कार्य कर अपने परिवार का पालन-पोषण करती थी । एक समय की वात है कि लडके की माँ को वाजार से आने मे देरी हो गई, लडका उम समय पाठशाला से आया था, उसको भूख जोर से लग रही थी । उमको रोटी कही भी नही मिली । उसने मोचा कि शायद आज माँ ने खाना नही बनाया होगा सो उदास होकर वैठ गया । कुछ समय वाद उसकी माँ आई । माँ को देख कर जोर मे वोला माँ तूने अभी तक खाना नही वनाया । क्या तेरे को शूली लग गई थी क्या (शूली एक प्रकार की मजा होती है ।) तव लडके की माँ ने कहा कि क्या तेरे हाथ कट गये थे जो कि ऊपर छीके पर रोटी रखी हुई थी सो तू उतार कर ले नही सकता था ।

ऐसी सामान्य हरकतें तो रोजाना प्राय हरेक के कहने मे आ जाती है पर जरा विचार करने की वात है कि यदि ऐसे ही विना मोचे ममझे वोलने मे कितना अनथ हो जाता है ।

हाँ तो वात अभी ही समाप्त नही हो रही है । ममय ने अपनी करवट वदली ।

समय आने पर दोनो अपना-अपना आयुष्य पूर्ण कर अपनी-अपनी गति को गये । लडके ने अपना आयुष्य पूर्ण करके पोतनपुर नामक नगर म एक ब्राह्मण के यहा जन्म

लिया उसका नाम ब्रह्मदत्त था और लड़के की माँ अपना आयुष्य पूर्ण कर पोतनपुर राजा देवव्रत के यहां महाव्रत नाम का राजकुमार बना।

एक समय की बात है, राजा का लड़का महाव्रत अपने दोस्तों के साथ बगीचे में आँख मिचौनी खेल रहे थे, तब महाव्रत एक खंडहर में छुप गया। एक चोर की काफी दिनों से राजकुमार के हाथ में रत्नजड़ित दस्ती पर नजर थी। आज उस चोर की मनोकामना पूर्ण हो गई। तब उस चोर ने राजकुमार को पकड़ कर हाथ से दस्ती निकालने की कोशिश करने लगा। राजकुमार ने शोर मचाया, उस डर के कारण वह चोर राजकुमार का हाथ काट कर लेकर भाग गया और उधर राजकुमार का शोर सुन कर दोस्त लोग व सुरक्षा कर्मचारी उस चोर के पीछे दौड़ने लगे चोर काफी आगे निकल चुका था। फिर भी सुरक्षा कर्मियों ने उसका पीछा नहीं छोड़ा। चोर अपनी सुरक्षा न देखकर घबरा गया। वह दौड़ता ही चला जा रहा था। उस ब्राह्मण का मकान बीच में पड़ता था। मकान के बाहर एक वृक्ष के नीचे ब्रह्मदेव सो रहा था चादर ओढ़ कर। यह मौका देख कर उस चोर ने फुर्ती से व सावधानी से कटा हुआ हाथ चादर ऊँची कर के अन्दर छुपा दिया और लापता हो गया। सुरक्षा कर्मी दौड़ते-दौड़ते वहाँ आ गए थे। उन्होंने एक आदमी चादर ओढ़ कर सो रहा था। सब सुरक्षा कर्मियों ने उस आदमी को चादर ओढ़ सोता देख उनको शक हो गया, तब एक सुरक्षा कर्मी ने चादर हटा कर उसको जगाया। जागने के तुरन्त बाद उनको वह हाथ भी नजर आ गया। तब उनको पूरा भरोसा हो गया कि यही वह चोर है जिसने राजकुमार का हाथ काटा है और यहां नींद का बहाना बना कर सो रहा है।

ब्रह्मदत्त को राजा के सामने पेश किया गया। राजा ने जोश में आ कर उसको मौत की सजा सुना दी और कहा कि इसको शूली दे दी जावे। दिन व वार देख कर ब्रह्मदत्त को शूली की सजा दी गई।

समय रथ का पहिया चल रहा था। एक समय की बात है पोतनपुर नगर के बाहर एक बगीचे में एक मुनिराज अपने शिष्य समुदाय के साथ पधारे। राजा भी यह समाचार सुन कर अपने परिवार सहित दर्शन व वन्दन करने बड़े लवाजमें के साथ आया। प्रवचन सुनने के बाद राजा ने अपने लड़के का पूर्व भव के बारे में पूछा तब मुनिराज ने राजकुमार का पूर्व भव बतलाया। राजा अचम्भे में पड़ गया और वह मुनिराज से कुछ नियम लेकर अपने महलों को चला गया और वह रोजाना आयम्बिल उपवास व प्रतिक्रमण-सामायिक करना, जैन मन्दिरों में पूजाएँ महोत्सव कराता। इस तरह काफी समय बीत गया और एक समय उपवास के अन्दर [illegible] हुई और [illegible] नहीं पाया और [illegible] हो गया वह [illegible] [illegible] में पहुँचा।
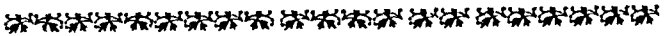
समस्त उत्तम गुणो मे क्षमा गुण का सर्वोच्च स्थान है। 'क्षमा वीरस्य भूषणम्' शूरवीरों का भूषण क्षमा का अद्‌भुत सिद्धान्त परमात्मा महावीर ने जगत् के समक्ष रखा है। असाधारण धैर्य, गाभीर्य, चातुर्य एव वीरोचित शौर्य के बल पर क्रोध के उपशमन से शान्त एव समत्वभाव की प्राप्ति सम्भव है। सच्चा क्षमावान तो निदक को भी उपकारी मार्ग-दर्शक मानकर प्रेम-भाव रखता है। अन्तर मे सहिष्णुता का अरुणोदय होना वीतराग मार्ग का प्रथम पडाव है। हृदय की सम्पूर्ण अनुमति के बिना चाही गई क्षमा केवल ढकोसला, औपचारिकता है।

रथ चले सुपथ पर

● श्री आशीषकुमार जैन

सब जीवो पर क्षमा धरावे, वह आप क्षमा जो मागे रे।

जैनी जन तो तेणे कहिए

समस्त उत्तम गुणो मे क्षमा गुण का सर्वोच्च स्थान है।। 'क्षमा वीरस्य भूषणम्' शूरवीरो का भूषण क्षमा का अद्‌भुत सिद्धान्त परमात्मा महावीर ने जगत् के समक्ष रखा है जिसे उन्होंने स्वय, गौतम गणधर आदि अनेकानेक योगी, मुनि एव राजर्षियो ने अपनाकर चार गति मे परिभ्रमण कर रहे अज्ञ जीवो हेतु उदाहरण प्रस्तुत किया है। क्षमा कमजोरी नही अपितु बल है, जिस विरल विभूति को यह अलौकिक शक्ति हस्तगत हो जाती है उसका कोई शत्रु इस ससार मे जन्म नही ले पाता। क्रोध पर विजय से क्षमागुण की प्राप्ति होती है। करोडो पूर्व का सयम फल नष्ट करने वाला, मित्र को शत्रु, स्नेही को विरोधी बना देने वाले क्रोध पर विजय कठिन तो अवश्य है किन्तु अशक्य नही है। असाधारण धैर्य, गाभीर्य एव वीरोचित शौर्य के बल पर क्रोध के उपशमन से शान्त एव समत्वभाव की प्राप्ति सम्भव है।

अन्यो द्वारा अपने प्रति हुए दुर्व्यवहार की उपेक्षा या उसका प्रतिवाद नही करना तथा स्वय कृतापराधो को स्वीकार कर उनकी माफी मांगना एव अपराधियो

को उदार हृदय से माफ कर देना क्षमा है। क्रोध एवं मान रूप कषायों की मंदता व समाप्ति हेतु क्षमा अचूक अस्त्र है। क्रोध से दिमागी शक्ति क्षीण हो जाती है, विनय विवेक खत्म हो जाते हैं किन्तु क्षमा समग्र विवेक का ज्ञान देती है। 'कम खाना एवं गम खाना' का सूत्र अपनाकर व्यक्ति कभी ठोकर नहीं खा सकता।

निमित्त प्राप्ति पर क्षमाशील कहलाते व्यक्ति की परीक्षा होती है। कोई व्यक्ति अपने वर्तन से अनाधिकृत चेष्टा करे; अपमान, अवज्ञा, निन्दा करे, वाणी या लेखनी द्वारा वीभत्स वचन रूबरू कहे, कहलावे एवं पत्र या अखबार के जरिए सीधे या तिरछे रूप में विना नाम, जाहिर नाम या नामान्तर से लिखे, ऐसे समय अपने धीरज को सहेज कर रखे, वही सच्चा सहिष्णु है। ध्यान रखें अप्रिय शब्द किसी कमजोर दिल व्यक्ति को आत्मघात के विचार तक पहुँचा सकते हैं। अतः इस शब्द श्रेणी की जानकारी कर इनका प्रयोग सर्वथा बन्द कर देना सभ्य एवं क्षमाशील व्यक्तियों के लिए उचित तथा शोभास्पद है।

कठोर शब्द :—(पत्थर सम कड़े) दुष्ट, चाण्डाल, पागल, अनार्य इत्यादि।

कटु शब्द :—(जहर सम कड़वे) निर्लज्ज, धूर्त, पाखण्डी, नीच इत्यादि।

मार्मिक शब्द :—(अग्नि सम दाहक) दुराचारी, दिवालिया, धोखेबाज आदि।

तानाशाही शब्द :—(लाठी सम प्रहारक) डूब जा चुल्लू भर पानी में, मामूली आदमी है, खुद को बड़ा ज्ञानी समझता है।

तीक्ष्ण दुधारी तलवार भी नरम रेशम का कुछ बिगाड़ नहीं सकती इसी तरह कोमल चित्तवृत्ति अर्थात् 'सहिष्णुता रूप क्षमा धारक' का दुर्जन लोग तनिक भी अहित नहीं कर सकते। जो व्यक्ति ईर्ष्यावश किसी का उत्कर्ष सहन नहीं कर सकते वे सत्पुरुषों को विचलित करने के लिए दुर्वचनों के प्रयोग में कृपणता नहीं करते। सज्जन पुरुषों को मन में यही विचार कर कि ये शब्द मेरे लिए नहीं अपितु [illegible] के लिए है, उस समय पूर्ण मौन धारण कर लेना चाहिए। मौन रहने पर [illegible] भड़काकर उत्तेजना दिलाने के लिए कहेगा "बोलता क्यों नहीं [illegible] गई है" परन्तु [illegible] यदि सुने ही जावें तो वह व्यक्ति [illegible] में परास्त होकर भाग जावेगा, यह अनुभव-सिद्ध बात है। [illegible] हल्ला मचाते हैं किन्तु यदि [illegible] ही जाता है। [illegible] होता है।

[illegible]

लेता है । सच्चा क्षमावान तो निंदक को भी उपकारी एव मार्गदर्शक मानकर प्रेमभाव रखता है । अन्तर मे सहिष्णुता का अरुणोदय होना वीतराग मार्ग का प्रथम पडाव है ।

ससार मे ऐसा कोई व्यक्ति नही जो अपराधी न हो, जिससे छोटा-वडा कसूर न हुआ हो । ससार के व्यवहारो मे भूल हो जाना स्वाभाविक है या कभी-कभी परिस्थितियाँ बेरहम वन गुनाह के लिये मजबूर कर देती है । दूसरो ने हमारे प्रति एव हमने दूसरो के प्रति जो भूले की उनके लिये क्षमा का आदान-प्रदान कर माफी रूप क्षमा है ।

'मुझ से भूल हो गई' इन शब्दो का उच्चारण वहुत ही कठिन है । यद्यपि आजकल मूछे नीची रखने का फैशन है अथवा अधिकाश के तो मूछे दिखाई नही देती परन्तु जव माफी मागने या भूल कबूलने का प्रसग हो तो सर्वप्रथम यही विचार मन को दवोच लेता है कि 'मूछ नीची हो जायेगी, नाक कट जायेगी, इज्जत को वट्टा लगेगा ।' कैसी विडम्बना है कि यश, कीर्ति, झूठी मान-प्रतिष्ठा के गुलाम इतना नही समझ पाते कि वैर की गठरी का वोझ ढोने मे इज्जत है या मन के कलमष को धोकर स्वच्छ करने मे इज्जत है । अपराध की माफी मागने वाला जगत् मे आदर का पात्र बनता है परन्तु अक्कड खा अपनी दिखावटी अकड के कारण लोकप्रिय नही वन पाता । 'पहले गलती उसने की अत वही क्षमा मागे' ऐसे विचारो से मन को कभी दुवल नही होने देना चाहिये । स्वय की भूल न होने पर भी खुद पहले क्षमायाचना करना उच्चकोटि की क्षमा है ।

शुभ अध्यवमायी, भद्र-परिणामी, जैन-तत्त्ववाद एव कर्मवाद का ज्ञाता तथा राग-द्वेष की मद परिणति वाला जीव क्षमा प्रदान कर सकता है । क्षमा दो प्रकार से दी जा सकती है—मागने पर एव विना मागे । शुद्ध हृदय से जव गुनाहगार माफी मागे तो समझदार तुरन्त सहर्ष माफ कर देते है । जिस प्रकार श्री श्रीपाल ने धवल सेठ को क्षमा किया उसी प्रकार उदार चित्त से स्वय क्षमा देना विन मागी क्षमा है । स्मरण रहे यदि अपराधी को क्षमा देने पर उसके द्वारा पुन अपराध की सम्भावना हो तो अनुभवी उसे शिक्षा के लिए स्वतन्त्र है ।

देवाधिदेव महावीर प्रभु की क्षमा केवल मानवो तक ही नही अपितु प्रत्येक जीवधारी चाहे वह एकेन्द्रिय हो या पचेन्द्रिय, सज्ञी हो या असज्ञी सभी के लिये है । सम्वत्सरी महापर्व की मधु बेला मे हमे प्राणिमात्र के लिये स्नेह सद्भाव, करुणा मैत्री की परिमल प्रसारित करनी है ।

हृदय की सम्पूर्ण अनुमति के विना चाही गई क्षमा केवल ढकोसला औपचारिकता है । 'अधा वाटे सीरणी अपने को ही दे' की कहावत अनुसार हमने अपने पूज्यो, मित्रो, सम्बन्धियो से खमाउसा खमाउसा का नाटक वहुत वार करा है । वास्तविक

खमतखामणा तो वही है जो त्रिकरण शुद्धि पूर्वक समस्त जीवराशि से की जाये, जिसमें शत्रुता विस्मृत कर शत्रु मित्र बन जाये।

हमारे दूर रहने वाले सम्बन्धियों से क्षमा हेतु बाजार से खरीदे क्षमा-पत्र प्रेषित करने में भयंकर दोष लगता है। प्रायः सभी के अनुभव की बात है कि अधिकांश लोग इन्हें रद्दी समझ कर फेंक देते हैं जिससे आकर्षण हेतु इन पर छपे तीर्थंकर देव के चित्रादि की घोर आशातना होती है। अतः विवेकी सज्जनों को इनका उपयोग कदापि नहीं करना चाहिये। हृदय में यदि वास्तव में क्षमा-भाव हो तो चार लाइनें हाथ से लिखने में शर्म और आलस क्यों? केवल औपचारिकता हेतु क्षमा-पत्रों के आदान-प्रदान का कोई औचित्य नहीं है।

क्षमा-गुण से हमारी व्यवहारिक एवं आत्मिक क्षमताओं का विकास होता है। खून के धब्बे कभी खून से धुल नहीं सकते, उसी प्रकार वैर वैर से, घृणा घृणा से नहीं अपितु क्षमा मैत्री-भाव के निर्झर द्वारा दूर हो सकती है। पर्युषण पर्व की आराधना सम्यक् प्रकार से कर हम भी निज मन का कलिमल धो डालें। खंधक मुनि जैसी सहिष्णुता, उदायण जैसी उदारता धारण कर मन को नर्म एवं नम्र बनाकर सांसारिक एवं धार्मिक जीवन के रथ को क्षमा रूप सुपथ पर आगे दौड़ाते हुये परम पद की प्राप्ति करें। यही शुभेच्छा।

☐ ☐ ☐

जरा सोचो

☐ नरेन्द्रकुमार कोचर
जयपुर

आज जैन समाज, जैन धर्म भगवान् महावीर स्वामी के निर्वाण को 2500 वर्ष व्यतीत हो जाने के बावजूद भी उनकी जय-जयकार कर रहा है, किसलिए, केवल इसलिए नही कि वे हमारे 24वे यानी अंतिम तीर्थंकर थे बल्कि इसलिए कि उन्होने हमे शिक्षा दी, जीने का ढग सिखाया, त्याग, सादगी, परोपकार आदि ऐसे मत्र दिये जिससे न केवल हम अपना जीवन बल्कि मानव मात्र का कल्याण कर सकते है। लेकिन हमने क्या किया ?

आज त्याग की जगह भोग ने स्थान ले लिया है, सादगी का स्थान आडम्बर ने ले लिया है, आज दुख इस बात का है कि अपने आपको भगवान् महावीर का सच्चा अनुयायी मानने वाले ही भगवान् महावीर के सिद्धातो को भूल गये हैं, हम कहाँ थे और आज कहाँ आ गये हैं, इस पर हम अगर विचार करें और उस पर अमल करें तो अपना ही नही मानव मात्र का कल्याण कर पायेंगे।

इच्छाओ को दमन करना तप करना है, तप करने से ही त्याग की भावना आती है। आज त्याग की बात करना मूर्खता है क्योकि त्याग की जगह भरा है स्वार्थ।

मानव आज औरो के लिए नही जी रहा है, वह जी रहा है अपने लिए। श्रमण भगवान् महावीर का सन्देश "जीओ और जीने दो" के सदेश को हम कैसे सार्थक करेंगे ? हमे एक ऐसे समाज की रचना करनी है जहाँ त्याग, सादगी व परोपकार का बोलबाला हो, हमने आज देश, राज्य, समाज का हित भुला दिया है, केवल अपने हित साधन मे ही लगे हुए हैं।

जब हम महाराजा भोज को याद करते ह कि कैसे उन्होने एक पक्षी की खातिर अपने सम्पूर्ण शरीर का मोह त्याग दिया। याद करते है उस भामाशाह को जिन्होंने धर्म पर सकट आने पर अपनी तिजोरी का मुह खोल दिया, कहा गया हमारा वह त्याग,

कहां गई परोपकार की वह भावना? भौतिकवाद के इस युग में हमने अपने सिद्धांत, अपनी मर्यादा सब भुला दी। आज हमारी आंतरिक शक्तियों पर बाहरी शक्तियां हावी हो गई, हमारे अन्दर ताकत है एक ऐसे समाज के निर्माण की जहां ऊँच-नीच का भेद न हो, सभी लोग समान भाव से अपना जीवनयापन कर सकें, हमे अपनी आंतरिक शक्तियों को जगाना होगा। कदम-कदम पर त्याग की भावना विकसित करनी होगी।

आज गुणवान पर चांदी के चंद सिक्के हावी हैं, त्याग करने वालों पर भोग हावी है, सादगी पर आडम्बर हावी है। समाज की रचना केवल एक व्यक्ति नहीं कर सकता, इसके लिए हमारे तमाम आचार्य भगवंतों को, मुनिराजों को एवं साध्वी समुदाय को आगे आना होगा, इसके साथ ही आगे आना होगा उच्च धनाढ्य वर्ग को। क्योंकि व्यक्ति हमेशा ऊपर देखता है, ऊपर का अनुसरण करता है, उच्च वर्ग अपने जीवन में त्याग, सादगी एवं परोपकार लावे तो नीचे वाले उसे देखकर अपना जीवन सुधार सकते हैं।

समाज सुधार के नाम पर हमने अनेक जगहों पर सार्वजनिक फन्ड बनाये। उनका कहां एवं कितना सार्थक उपयोग हुआ इस पर विचार करें तो हमारी प्रगति नगण्य है। [illegible] आचार्य विजय वल्लभ सूरीश्वर जी म० सा० ने समाज को सार्वजनिक भक्ति की प्रेरणा दी, उनके सन्देश आज भी कानों में गूंजते हैं कि "तुम धानक में भोजन कर रहे हो और तुम्हारा एक भी साधर्मिक [illegible] बेकार है, भोजन के अभाव में [illegible] तो तुम भोजन नहीं [illegible]।" ऐसे युगद्रष्टा आचार्य भगवंत की भावना

को हम कहां साकार कर पाये? सार्वजनिक समारोह में हमने हर जगह घोषणा की कि ऐसे परिवार आगे आवें जो पिछड़ गये हैं, रोजगार के लिए आर्थिक साधनों की जिन्हें जरूरत हो वो आगे आवें, कितने आगे आवें? नहीं आये, जरूरत है उन्हें आगे लाने की, हमें अपनी नीतियां अपने विचार बदलने होंगे, क्योंकि आज हर व्यक्ति स्वाभिमानी है, समय के क्रूर हाथों ने उसे पछाड़ दिया है, वो टूट रहा है लेकिन वो हाथ नही फैला रहा है। हाथ वही फैला रहे हैं जिन्होंने इस तरह के कार्य को अपना पेशा बना लिया है। हमारे एक ओर महामानव राष्ट्र संत शांतमूर्ति आचार्य विजय समुद्र सूरीश्वर जी महाराज ने अपने सन्देश में एक जगह कहा, "जरा सोचो तो अभिमान और प्रदर्शनपूर्वक दिया गया दान क्या हमारी महत्त्वाकांक्षा का सूचक नहीं है। स्वार्थ और उपेक्षापूर्ति के लिए दिया गया दान क्या हमारी व्यापार आकांक्षा का सूचक नहीं है। कल्याणदान तो वही है जो विनम्रता, उदारता और गुप्ततापूर्वक दिया जाए।" इसलिए हमें अपनी विचारशैली में कार्यशैली में परिवर्तन करना होगा। पिछड़े परिवारों को आगे लाने के लिए हमें सहना होगा, उन्हें साथ लेने के लिए। हमारी त्याग, सादगी, उदारता एवं स्नेह का व्यवहार ही उन्हें आगे ला सकता है। आचार्य विजय वल्लभ सूरि के सपनों को साकार तभी कर पायेंगे जब हमारा एक भी साधर्मिक भाई-बहन, बेसहारा महसूस न करे। [illegible] के सुधर जाने पर सारी [illegible] समाज में [illegible] हमारे नजर आती है [illegible] के सुधर जाने पर समाज, परिवार में [illegible] नजर आती है। हमारे समाज में, हमारे परिवार में हमारे ही हमारे [illegible]

इसलिए जरूरी है कि सम्पूर्ण समाज के सदस्य अपने विचारो मे, अपनी जीवन पद्धति मे ऐसा परिवर्तन लाये कि स्नेह की वर्षा हो।

हम अपने आचरण मे विचारो मे परिवर्तन करके एक ऐसे समाज की स्थापना करें जहाँ गुणवान की इज्जत धनाढ्य से ज्यादा हो, आडम्बर वालो से सादगी वाले की, भोगवाले से त्यागवाले की इज्जत ज्यादा हो। आचार्य विजय समुद्र सूरीश्वर जी महाराज सा० के अनुसार कल्याणदान वही है जो गुप्ततापूर्वक दिया जाय, क्यो नही हम एक ऐसी योजना आरम्भ करें अपनी सस्थाओ मे जहाँ एक गोलख रखी जाय उन सार्धमिक वन्धुओ के लिए जिसमे वे अपने मन की व्यथा, अपनी आवश्यकता अथवा वो सार्धमिक फण्ड से क्या चाहते हैं लिखकर उसमे डाल जाय ताकि समाज के चन्द कर्णधारो के अलावा किसी को कुछ ज्ञात न होने पावे कि किसने किसको क्या दिया ?

आज पर्युषण के इस पुनीत महापर्व पर हम सकल्प करें एक ऐसे वातावरण के निर्माण का जहा गुणवान, त्याग, सादगी एव आडम्बरविहीन लोगो को समाज मे उच्च स्थान प्राप्त हो जिन्हे देखकर हम अपना जीवन वदलने पर मजवूर हो जाय। यह कार्य एक व्यक्ति से नही होगा, नही होगा चन्द दिनो मे इसके लिए जरूरत होगी सतत प्रयास की एव साथ ही धैर्य एव सहनशीलता की। तो आइये हम सव मिलकर प्रयास करे एक ऐसे समाज की जहा सभी एक परिवार की तरह सादगी व स्नेह से रहे। तभी हम अपने उन महापुरुषो की भावना को साकार कर पायेंगे। उस वल्लभ के सन्देश को जन-जन तक पहुँचाना है जिसके लिए उन्होंने अपना सम्पूर्ण जीवन लगा दिया, उस सार्धमिक वन्धु को आगे लाने का प्रयास करना है। उसे अपने ही परिवार का अग मानकर। काम करना है, प्रयास करना है परहित के लिए न कि केवल नाम के लिए। तभी हम भगवान महावीर के सच्चे अर्थों मे अनुयायी कहलाने के हकदार होगे।

जय महावीर !

☐ ☐ ☐

- जैन धर्म वहुत ही उच्चकोटि का है। इसके मुख्य तत्त्व विज्ञान् शास्त्र के आधार पर रचे हुये हैं, ऐसा मेरा अनुमान ही नहीं पूर्ण अनुभव है। ज्यो-ज्यो पदार्थ विज्ञान आगे वढता जाता है, जैन धर्म के सिद्धान्तो को पुष्ट करता है।

इटली के प्रसिद्ध विद्वान
एल पी हेसीटोरो

सेवा की महत्त्वपूर्ण उपलब्धियो से परिपूर्ण है। महामगलकारी नवकारमत्र के प्रति अटूट आस्था उनके रोम-रोम मे समाई थी। उनका स्पष्ट रूप मे कहना था कि "अध्यात्मक की बात एक ओर ही रखे तो भी, ऐसा कौनसा भौतिक सुख है जो नवकार के जाप से प्राप्त नही होता। आज हम अन्य देव देवियो के मत्रो के पीछे दीवाने बने हैं किन्तु जिस महामत्र के अक्षर-अक्षर पर हजारो देव अधिष्ठित हैं उसकी उपेक्षा मात्र इसलिए करते है कि वह हमे सहज मे मिला है।" आचार्य भगवन्त सतत नवकार के ध्यान मे तन्मय रहते, चाहे किसी भी कार्य मे सलग्न हो उनके भीतर नवकार जाप बन्द नही होता था। ऐसे उच्चकोटि के साधक गुरुदेव के सम्पर्क मे आने वाले प्रत्येक व्यक्ति के मन मे वह नवकार की ज्योत जला देते थे। कम से कम एक माला गिनवाकर ही वासक्षेप देते एव प्रतिदिन नवकार जाप की प्रेरणा एव नियम देकर उन्हे आत्म कल्याण हेतु उद्यत करते।

हमारा कर्म भाग्य कहे या भौतिक जीवन का दुष्प्रभाव आज हमे जैन धर्म के मौलिक सिद्धान्तो को समझने की रुचि नही है। यही कारण है कि हमारे देवगुरु के प्रति हमे सम्यक् श्रद्धा उत्पन्न नही हो पाती। 'जहाँ देखा चमत्कार वही जा पहुँचे सरकार' सासारिक सुखो की मृगतृष्णा मे हम आज इधर तो कल उधर झुकते हैं लेकिन कही भी सतुष्टि नही मिल पाती। पूज्य आचार्य देव ऐसे दिग्भ्रमित लोगो को वीतराग देव का स्वरूप समझाते, कुगुरु-कुदेव वन्दन के फलस्वरूप नरक वेदना का दिग्दर्शन करवाते और भव्य जीवो को जिनदेव के प्रति एकनिष्ठ करते। उनका कहना था कि वीतराग भक्ति से व्यक्ति को भौतिक सुख तो अनाज के साथ घास फूस की तरह स्वयमेव मिल जाते हैं। उनके वचनो पर फूल चढाने वाले भक्त उनकी प्रेरणा से नियमित स्वद्रव्य से पुष्पो एव सोने चादी के वर्को की आगी करते है।

स्वर्गीय दादागुरु विजयानद सूरी, विजय वल्लभ सूरी आदि गुरुदेवो का नाम लेते ही आपके हृदय का उत्साह द्विगुणित हो जाता था। प्रवचन मे, वार्तालाप मे उनके प्रेरक जीवन के प्रसग आप प्राय सुनाया करते थे।

देवद्रव्य वृद्धि पर वह विशेष भार देते थे। उनका कहना था कि देवद्रव्य वृद्धि करने वाले श्रावक के समीप दरिद्रा देवी कभी आने की हिम्मत नही जुटा सकती। भण्डार मे डाला हुआ धन हमे अनेक गुणा होकर वापस मिलता है बशर्ते हम निष्काम भाव से भण्डार भरे।

सूरिजी ने अपने जीवन मे तप को आत्मसात् कर लिया था आपने 118 अट्ठाई, 4 वर्षी तप, 501 अट्ठम, 560 छट्ठम आदि की घोर तपश्चर्या की थी। उनकी तपसाधना के अलौकिक प्रभाव का हजारो भक्तो को प्रत्यक्ष अनुभव है।

अपने गुरु महाराज की निश्रा मे एव स्वतन्त्र विचरण कर आपने भारी शासन प्रभावना की है। सम्मेत शिखरादि तीर्थों की रक्षा, शत्रुजय तीर्थ पर मुख्य टूक मे दादा का गर्मागर्म पानी से प्रक्षाल बन्द, नागेश्वर, फलोदी, परासली आदि तीर्थों की उन्नति के कार्य आप श्री के द्वारा हुए हैं।

जयपुर शहर पर उनकी विशेष कृपा रही है। दो चातुर्मास एवं शेषकाल में उन्होंने अनेक शासन प्रभावना के कार्य यहाँ सम्पन्न करवाए हैं जिनकी स्मृति आज भी गुरुभक्तों के मन में ताजा है। सैंकड़ों दीपकों के साथ सवा लाख फूलों की आंगी, तपाराधनाएं, अट्ठाई महोत्सव में पूजाओं का ठाट भुलाए नहीं भूलता। प्रथम चौमासे में हुए अठारह अभिषेक के समय अभीकरण से उन्होंने सिद्ध कर दिया था कि चमत्कार को नमस्कार नहीं अपितु शुद्ध श्रद्धा एवं भक्ति पूर्वक नमस्कार में स्वतः चमत्कार रहा हुआ है। उनकी सत्प्रेरणा से श्री सुमतिनाथ जिनालय जयपुर में प्रारम्भ स्नात्र पूजा आज भी अविराम रूप से चालू है।

हठाग्रह एवं कदाग्रह से कोसों दूर श्रमणसूर्य आचार्य देव का गत वैशाख वदी तीज 20 अप्रैल, '92 को नागेश्वर तीर्थ में अट्ठाई तपस्या के तीसरे दिन कालधर्म हो गया। इस हृदय विदारक समाचार से समग्र समाज स्तब्ध रह गया। आपके संयम जीवन के अनुमोदनार्थ प्रत्येक श्री संघ में जिनेन्द्र भक्ति महोत्सव एवं गुणानुवाद सभाएं हुई। विजय वल्लभ समुदाय के वर्तमान गच्छाधिपति आचार्य इन्द्रदिन्न सूरीश्वर जी महाराज ने भंदर में देववन्दन के उपरान्त गुणानुवाद सभा में आपके दुष्कर तप, देवद्रव्य, नवकार के प्रति अडिग आस्था को दुर्लभ बताते हुए आपके विछोह को जिनशासन एवं समुदाय की अपूरणीय क्षति बताया।

शासन की उन्नति हेतु सतत प्रयासरत आचार्य भगवान के जीवन को शब्दों में बांधना संभव नहीं है। उनके महती आशिष की कलम से पूज्य श्री के गरिमामयी जीवन का अहसास मात्र कराने का प्रयास मैंने किया है। महात्मना कीर्तन हि श्रेयोनिः महात्माओं का कीर्तन 'श्रेयस्कर श्रेयानास्पदम्' है किन्तु तभी जब उनके आदर्शों को अपनाते हुए हम आत्मसाधना के मार्ग पर बिना रुके चलते रहें।

जैन धर्म बहुत प्राचीन धर्म है। महावीर के पहले तेईस तीर्थंकर हो चुके हैं। सबसे पहला तीर्थंकर राजा ऋषभदेव था जिसके पुत्र भरत के नाम से इस देश का नाम भारतवर्ष हुआ।

इतिहास के प्रसिद्ध विद्वान्
—जयचन्द्र विद्यालंकार

श्री जैन श्वेताम्बर [मूर्तिपूजक]
महावीरजी तीर्थ रक्षा समिति राज. जयपुर

श्री महावीरजी तीर्थ जयपुर से करीव 160 किलोमीटर दूरी पर हिण्डौन के पास स्थित है तथा जाने के लिए ट्रेन व सडक द्वारा अच्छा रास्ता है। इस मन्दिर का निर्माण सम्वत् 1826 मे श्री जोधराजजी पल्लीवाल ने करवाया था। वे भरतपुर रियासत के दीवान थे। यहाँ की मूल प्रतिमा जमीन से निकली हुई है तथा वडी चमत्कारी प्रतिमा है एव श्वेताम्वर रूप मे है। इनकी प्रतिष्ठा श्वेताम्वर आचार्य भट्टारक महानन्द सागर सूरी के द्वारा करवाई गई थी।

प्रारम्भ मे श्वेताम्वर पल्लीवाल जैन इसकी व्यवस्था करते थे। वाद मे जयपुर राज्य मे मुन्शी प्यारेलालजी के रेवेन्यू मिनिस्टर होने से तथा पल्लीवाल समाज की आर्थिक स्थिति कमजोर होने के कारण इसका प्रवन्ध दिगम्वर समाज ने ले लिया और धीरे-धीरे उन्होंने दिगम्बर तीर्थ घोषित कर दिया तथा श्वेताम्वर आमनाय के निशानो व लेखो को मिटा दिया।

इसकी व्यवस्था को पुन प्राप्त करने के लिए श्वेताम्वर समाज निरन्तर प्रयास कर रहा है। करीव 40 वर्षों से न्यायालय मे केम चल रहा है। इस समय सारा प्रवन्ध व जायादाद जो कि करोडो मे है दिगम्वर भाइयो के हाथो मे है, तथा उसी पैसो से देश के चोटी के वकीलो से विभिन्न-विभिन्न प्रकार के इश्यू वनवाकर असली केस को लम्वा करते जा रहे हैं। उसके पीछे मशा असली मुद्दे को कमजोर करते जाना है।

अत मैं निवेदन करता हूँ सारे समाज से कि आगे आए तथा इस तीर्थ के विषय मे जो भी जानकारी (मौखिक या दस्तावेजी) रखते हो हमे अवश्य सूचित करे ताकि सचाई पर से झूठ का परदा उठाया जा सके और हमे हमारा खोया हुवा तीर्थ वापस मिल सके, जिससे कि हम हमारी आमनाय से प्रभु की सेवा कर सके।

इस कार्य मे हमे निरन्तर सहयोग मिल रहा है श्री वीरेन्द्रप्रसादजी अग्रवाल एडवोकेट, श्री गुमानचन्दजी लुनिया एडवोकेट, श्रीमान् सागरमलजी मेहता, ओमप्रकाश जी गर्ग, श्री अमृतमलजी भाडावत, श्री जिनेश जैन एव शिवकुमार जैन का। इनके अलावा वहुत से महानुभावो, साधु-मुनि राजो का प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष तन, मन, धन से सहयोग हमे मिल रहा है, उन सवके हम हृदय से आभारी है तथा भविष्य मे भी पूर्ण सहयोग की अपेक्षा करते हैं।

आप सव से यह भी प्रार्थना है कि इस महान् तीथ पर वर्ष मे एक दफा अवश्य पधारें तथा इसकी व्यवस्था की कमी मे आपके विचारो से हमे अवगत करावे। वहाँ पर ठहरने के लिए अच्छा प्रवन्ध है तथा श्वेताम्बर पल्लीवाल जैन धर्मशाला भी स्थित है। इस विषय मे अधिक जानकारी के लिए हमसे सम्पक करे।

राजेन्द्रकुमार चत्तर
अध्यक्ष

चत्तर एण्ड कम्पनी जौहरी वाजार, जयपुर • फोन 563670

नवकार महामन्त्र के आराधक एवं महान् तपस्वी
स्व. आचार्य श्रीमद्विजय ह्रींकार सूरीश्वरजी म. सा.

—श्री ज्ञानचन्द भण्डारी

जैन जगत् की महान् विभूति जैनाचार्य श्रीमद् विजयह्रींकार सूरीश्वरजी म. ने राजस्थान की भूमि पर स्थित नलिनी गुल्म विमान तुल्य महाप्रसाद श्री राणकपुर महातीर्थ के समीप सादड़ी में जन्म लेकर वसुन्धरा को गौरवान्वित किया।

पंजाब केसरी युगवीर जैनाचार्य दीर्घद्रष्टा श्रीमद्विजय वल्लभ सूरि म. के वरद् हस्त से भागवती दीक्षा अंगीकार कर आप श्री के प्रशिष्य महान् तपस्वी आ. विजय पूर्णानन्द सूरि म. के शिष्य रूप में मुनि ह्रींकार विजय जी म. बने। आपने महाराष्ट्र, मैसूर, मद्रास, बंगाल, बिहार, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, राजस्थान, गुजरात आदि में विचरण कर जैन शासन की अपूर्व प्रभावना की। अनेक प्रतिष्ठाएँ, उपधान, उद्यापन, महोत्सव, आदि करवाये। [illegible] संघ में आपने पूर्ण कठोरता पूर्वक यात्रियों को नियम पालन कराये।

[illegible] की [illegible] में अद्वितीय शक्ति थी। आप [illegible] [illegible]

[illegible]

कार्य को तुरन्त सभव करने की शक्ति की अपूर्व चावी प्रत्येक को प्राप्त हो गई । फलस्वरूप अनेक रोगो का उपचार इस माध्यम से स्वत होने लगा। कैसर जैसे असाध्य रोग, अलसर, डायविटीज, आदि रोगो से मुक्ति पाने लगे । जिनके अनेक उदाहरण आज भी मौजूद हैं ।

पू आ भगवन्त ने जयपुर मे दो चातुर्मास किये, जिसमे परमात्म भक्ति की रमझट इस प्रकार जगादी कि आज भी जब स्नात्र महोत्सव होता है तो उनकी याद हृदय पटल पर आये विना नही रह पाती । आपने चातुर्मास काल मे १०८ से अधिक पूजाओ के माध्यम से, सवा लाख पुष्पो की अगरचना के माध्यम से श्रद्धालुओ का जिन भक्ति के प्रति अगाट प्रेम जगा दिया एव देव द्रव्य का रागी वना दिया ।

आपने आ पद पर आरूढ होकर सर्व प्रथम सम्मेत शिखर पर अष्टादश अभिषेक कराये थे, वहा पर होने वाले विवाद को शान्त कराया एव तीर्थ की रक्षा के लिए अभूतपूव कार्य किया ।

श्री फलवद्धि पार्श्वनाथ तीर्थ पर अपूर्व जागृति आपने कराई और यह सिद्ध किया कि मेला भरना शास्त्र विरुद्ध है । इसे वन्द कर दिया जावे एव वार्षिकोत्सव मनाने के साथ हमेशा होने वाली पक्षाल पूजानादि चढावे हमेशा-हमेशा के लिए कायम कराये एव उपाश्रय हाल वनाकर तीर्थ पर काफी कार्य कराये । फलस्वरूप प्रत्येक दिन यात्री वरावर आने लगे । परासली तीर्थ के जिर्णोद्धार के कार्य को इस सुन्दरतम तरीके से कराया ताकि प्राचीनता जरा भी नष्ट नहीं हो पाये । नागेश्वर पार्श्वनाथ तीर्थ पर आप ने करीब ५-७ साल मे वरावर विचरण किया एव शेष काल मे तीर्थ पर स्थिरवास कर अपूर्व प्रभावना का कार्य कराया । आपने नागेश्वर तीर्थ पर चौमुखाजी की अजनशलाका प्रतिष्ठा गत ३ वर्ष पूर्व कराई एव आपके शिष्य पन्यास प्रवर पुरन्दर विजयजी म सा का काल धर्म होने के वाद उनके अग्नि सस्कार के स्थान पर भव्य समाधि मन्दिर वनवाया ।

आपने अपने जीवन काल मे ५६६ वेले ५५१ अट्ठम (तेले), १२६ अट्ठाई, ४ वर्षीतप की तपस्या कर कर्म खपाने का कार्य किया । जप तप आराधना का प्रयोगात्मक अनुभव आपके पास था । आप श्री के सम्पर्क मे जो भी एक वार आया वह आपके व्यक्तित्व से प्रभावित होकर वार-वार आपकी निश्रा सान्निध्यता प्राप्त करने का उत्सुक वन जाता था । जैन शासन मे आप अभूतपूर्व व्यक्तित्व के रूप मे सामने आये जिसमे तप जप एव त्याग का त्रिवेणी सगम विद्यमान था जो युग-युग तक आपकी याद को जन-जन के हृदय पटल पर अकित रखेगा ।

शासन देव से विनती है कि ऐसे व्यक्तित्व अधिक से अधिक शासन मे उत्पन्न होकर जैन शासन की गौरव गाथा को आगे वढाते जावें ।

□ □

श्रद्धांजलियां

विगत वर्ष में जिन शासन शिरोमणि आचार्य भगवन्त, समाज सेवक एवं महासमिति के दो पूर्व पदाधिकारी काल धर्म को प्राप्त हुए। जैन जगत् को इससे जो अपार क्षति हुई उसकी पूर्ति सहज सम्भव नहीं है लेकिन नियती के विधान के आगे किसी का वश नहीं है। तपागच्छ संघ सभी के प्रति अपने हार्दिक श्रद्धा सुमन समर्पित करते हुए उनकी आत्मा की शान्ति के लिए शासन देव से प्रार्थना करते है।

आचार्य श्री ह्रींकारसूरीश्वरजी म. सा. : जिन शासन शिरोमणि, महान् तपस्वी, नवकार महामंत्र के महान् आराधक आचार्य श्री का नागेश्वर तीर्थ की पावन धरा पर देहावसान हुआ। आपने पिछली दशाब्दी में दो चातुर्मास जयपुर में किए तथा उन्ही की प्रेरणा से प्रारम्भ सामूहिक स्नात्र पूजा की व्यवस्था से जिन भक्ति की अनूठी परम्परा निरन्तर कायम है।

आचार्य श्री भद्रंकरसूरीजी म. सा. : जैन शासन के प्रकाण्ड विद्वान्, कर्णाटक केसरी के नाम से सुप्रसिद्ध आचार्य भगवन्त भी अभी हाल ही में काल धर्म को प्राप्त हुए। आप [illegible]

प्रसिद्ध समाजसेवी, प्रकाण्ड विधिवेत्ता श्री पुखराजजी सा. सिंघी, सिरोही : भारतवर्ष के जैन जगत् में शायद ही कोई हो जो श्रीमान् पुखराजजी सा. सिंघी के नाम से परिचित नहीं हो। जैन जगत् की अनेकों संस्थाओं से जुड़े हुए महान् समाजसेवी ने अपने जीवनकाल में जो सेवाये की हैं उन्हें कभी नहीं भुलाया जा सकेगा। राजस्थान जैन सघ संस्थान के अध्यक्ष के रूप मे आप २८ दिसम्बर, ९१ को बैठक की अध्यक्षता करने जयपुर पधारे थे तथा पब्लिक ट्रस्ट, देव द्रव्य, जीवदया आदि अनेक विषयों पर मार्गदर्शन प्रदान किया था।

महासमिति के पूर्व सदस्य श्री जसवन्तमलजी सा० सांड : [illegible]

ही पदचिह्नों पर चलते हुए आपके परिवार के सदस्य जिन शासन सेवा के प्रति समर्पित हैं।

महासमिति के पूर्व सदस्य श्री कुन्दनमलजी सा छाजेड श्रीमान् छाजेड सा भी कई बार महासमिति के सदस्य एव पदाधिकारी रहे तथा जिन शासन सेवा एव श्रीसघ के कार्यो के प्रति सदैव तत्पर एव समर्पित रहे हैं। आप भी अपने पीछे भरापूरा परिवार छोड गए हैं।

श्री बालचदजी चतर, मनोहर थाना तपागच्छ सघ के आडिटर श्री राजेन्द्रकुमार चतर, बी ए के पिताश्री श्री बालचदजी चतर का कुछ माह पूर्व ही देहावसान हुआ। आप बहुत ही धर्मनिष्ठ प्रकृति के थे तथा अपना अधिकाश समय धर्म ध्यान में व्यतीत करते थे। ८८ वर्ष की उम्र में भी नियमित रूप से पूजा, दोनो समय प्रतिक्रमण करते थे उपवास आयम्बिल उपधान आदि तप भी सम्पन्न किए। मंदिर की सम्पूर्ण व्यवस्था भी आपही देखते थे। आपकी भी समाज सेवा के प्रति रुचि थी तथा आपकी ही प्रेरणा एव मार्गदर्शन से आपके परिवार के सदस्य जिन शासन सेवा के प्रति समर्पित हैं। श्री आर के चतर निरन्तर कई वर्षों से इस सघ के आडिटर का दायित्व वहन किये हुए हैं। आप भी अपने पीछे भरापूरा परिवार छोड गए हैं।

शासन देव सभी की आत्मा को शान्ति प्रदान करे, यही कामना है।

—सम्पादक मण्डल

मैं अपने देशवासियो को बताऊंगा कि जैन धर्म के जैनाचार्यो मे कैसे उत्तम नियम और उच्च विचार हैं। जैनो का साहित्य बौद्धों के साहित्य से अत्यधिक ऊंचा है और जैसे जैसे मैं जैन धर्म और उसके साहित्य को समझता हूँ वैसे वैसे अधिक आनन्दानुभूति प्राप्त करता हूँ। जैनो के महान् साहित्य को अलग यदि कर दिया जावे तो साहित्य की क्या दशा होगी?

जर्मनी के प्रसिद्ध विद्वान् डॉक्टर जोन्स

का लाभ प्राप्त किया । झाकी के समक्ष श्री नन्दीश्वर तीर्थ पूजा पढाने का लाभ भी मण्डल परिवार ने लिया ।

गत चातुर्मास मे प्रति माह सक्रान्ति पर्व पर मण्डल का बाहर से पधारे अतिथियो की बनजी ठोलिया धर्मशाला में आवास व्यवस्था एव भोजनादि की व्यवस्था मे पूर्ण सहयोग रहा । विशेषत गुजराती समाज अतिथिगृह मे क्षमापना सक्राति पर देश के कौने-कौने मे बडी सख्या मे पधारे गुरुभक्तो हेतु सम्पूर्ण व्यवस्था की जिम्मेदारी भी मण्डल ने निष्ठापूर्वक वहन की ।

भगवान महावीर स्वामी के निर्वाण कल्याणक पर मण्डल द्वारा पावापुरी जलमदिर की रचना की गई । इसके उद्घाटनकर्ता थे उदारमना श्री मोतीचन्दजी वैद एव दीप प्रज्ज्वलन श्री मनोहरमलजी साहब लुणावत ने किया । यह झाकी इतनी अनूठी बन पडी थी कि इसे देखने के लिये दर्शनार्थियो का जमघट लगा रहा ।

आचार्य देव श्रीमद् विजय इन्द्रदिन्न सूरीश्वरजी के ६९वें जन्म दिवस के प्रसग पर मण्डल परिवार ने सास्कृतिक कार्यक्रमो मे बढ चढकर भाग लिया । भक्ति सन्ध्या के साथ-साथ मण्डल द्वारा श्री जम्बू स्वामी नाटक का सफल मचन किया गया । इस ढग का यह मण्डल का प्रथम प्रयास था । नाट्य निर्देशिका सरोज कोचर का धन्यवाद के साथ उपस्थित विशाल जन समुदाय ने नवोदित कलाकारो द्वारा सशक्त भावाभिव्यक्ति

की तालियों की गड़गड़ाहट से सराहना की। नाटक की सफलता से प्रभावित होकर मुख्य अतिथि श्री वी. सी. भाभू एवं अन्य दर्शक बन्धुओं ने जो आर्थिक सहयोग प्रदान किया उसके लिये मण्डल उनका हार्दिक आभार व्यक्त करता है। जयपुर श्री संघ के अध्यक्ष श्री हीराभाई चौधरी ने कलाकारों को पारितोषिक प्रदान कर उनके उत्साह में वृद्धि की।

यह नाटक इतना लोकप्रिय बना कि अजमेर उपाश्रय में विजयवल्लभ सूरी महाराज की मूर्ति स्थापना एवं शिवजीराम भवन, जयपुर में नव-निर्मित हाल के उद्घाटन के अवसर पर मण्डल को आमन्त्रण मिलने पर इसका पुन. मंचन किया गया। अजमेर श्री संघ द्वारा प्रदत्त सहयोग एवं खरतरगच्छ संघ, जयपुर द्वारा कलाकारों को पैन सैट प्रदान किये गये जिसके लिये मण्डल उन्हें धन्यवाद प्रेषित करता है।

मण्डल के सभी सदस्यों में तीर्थयात्रा की भावना सदैव बलवती रहती है। इस वर्ष भी मण्डल ने नाकोड़ा, बाड़मेर, लोद्रवा, जैसलमेर, पोकरण, फलौदी आदि तीर्थों की यात्रा की। इसके अतिरिक्त बाल संस्कार सत्र में भी मण्डल ने सहयोग दिया। तेरापंथ युवक परिषद् द्वारा आयोजित संगीत प्रतियोगिता में मण्डल के श्री प्रीतेश शाह ने द्वितीय पुरस्कार प्राप्त किया, उन्हें बधाई।

आपसी स्नेह एवं सौहार्द्र भावनाओं में वृद्धि हेतु मण्डल द्वारा मोहनबाड़ी में दो बार गोठ एवं खेलकूद प्रतियोगितायें रखी गई। आमेर में भी ऐसी गोठ आयोजित की गई।

इस वर्ष आचार्य देव श्री हिरण्यप्रभ सूरीश्वरजी आदि ठाणा ३ के चातुर्मास प्रवेश के साथ ही मण्डल में नई प्रवृत्तियों को वेग मिला है। प्रसन्नता का विषय है कि आचार्य देव के आशिष एवं प्रेरणा से कई सदस्यों ने नियमित प्रभु पूजा की है एवं जीवन संस्कारी बनाने हेतु नियम ग्रहण किये हैं।

मण्डल की गतिविधियाँ अनुशासित ढंग से चल रही है। इसके लिये मैं समस्त श्री संघ एवं कार्यकर्ताओं के प्रति कृतज्ञ हूँ। आशा है मण्डल परिवार को समस्त श्री संघ का पूर्ववत मार्ग-दर्शन एवं सहयोग मिलता रहेगा।

जय वीर !

श्री जैन श्वे. तपागच्छ संघ, जयपुर की महासमिति

(कार्यकाल सन् 1991 से 1993)

क्र स	नाम व पता	पद	फोन कार्यालय	फोन निवास
1	श्री हीराभाई चौधरी 6-डी, विला चाणक्यपुरी तीज होटल के पीछे, ब्रनीपार्क	अध्यक्ष	61430	73611
2	श्री हीराचन्द वैद जोरावर भवन, परतानियो का रास्ता	उपाध्यक्ष	—	565617
3	श्री मोतीलाल भडकतिया 2335, एम एस बी का रास्ता	सघ मत्री	46149	560605
4	श्री दानसिंह कर्णावट एफ-3, विजय पथ, तिलक नगर	अर्थ मत्री	565695	48532
5	श्री नरेन्द्रकुमार कोचर 4350, नथमलजी का चौक	मदिर मंत्री	—	564750
6	श्री सुरेश मेहता 322, गोपालजी का रास्ता	उपाश्रय मत्री	60417	563655 561792
7	श्री राकेश मोहनोत 4459, के जी बी का रास्ता	आयम्बिलशाला भोजनशाला मत्री	—	561038
8	श्री जीतमल शाह शाह बिल्डिग, चौडा रास्ता	भण्डाराध्यक्ष	—	564476

क्र. सं.	नाम व पता	पद	फोन कार्यालय	फोन निवास
9.	श्री अशोक जैन 1004, कोटेवालों का मकान अचारवालों की गली गोपालजी का रास्ता	शिक्षा मंत्री	—पी.पी.	560851
10.	श्री भगवानदास पल्लीवाल पल्लीवाल हाऊस, चाकसू का चौक	हिसाब निरीक्षक	551734	562007 564407
11.	श्री तरसेमकुमार जैन अक्षयराज, महावीर भवन के सामने आदर्श नगर	संयोजक जनता कॉलोनी मंदिर	46899	45039 41342
12.	श्री उमरावमल पालेचा पालेचा हाऊस, पीपली महादेव एम. एस. बी. का रास्ता	वरखेड़ा मंदिर संयोजक	564503	560783
13.	श्री विमलकान्त देसाई दरोगाजी की हवेली के सामने ऊँचा कुआ, हल्दियों का रास्ता	चन्दलाई मंदिर संयोजक	—	561080
14.	श्री जतनमल ढढ्ढा बी-10-जी, गोविन्द मार्ग आदर्श नगर	उपकरण भण्डार संयोजक	565560	40181
15.	श्री आर. सी. शाह [illegible] हाऊस, बापू बाजार	सदस्य	565424	564245
16	श्री [illegible] शाह [illegible] फैक्ट्री [illegible] का दरीबा	,,	49910	45033
17	श्री [illegible] [illegible] का रास्ता [illegible] का रास्ता	,,	565514	560792

क्र स	नाम व पता	पद	फोन कार्यालय	फोन निवास
18	श्री चिन्तामणि ढड्ढा ढड्ढा हाऊस, ऊँचा कुग्रा हल्दियो का रास्ता	सदस्य	—	565119
19	श्री नरेन्द्रकुमार लूनावत 2135, लूनावत हाऊस, लूनावत मार्केट घीवालो का रास्ता	,,	561446	561882
20	श्री मदनराज सिंघी, एडवोकेट डी-140, बनीपाक	,,	—	62845
21	डॉ भागचन्द छाजेड पाँच भाइयो की कोठी मेटल हॉस्पीटल रोड	,,	—	43570
22	श्री रतनचन्द सिंघी बेरी का बास, के जी वी का रास्ता	,,	560918	561175
23	श्री श्रीचन्द डागा मनीरामजी की कोठी, रामगज बाजार	,,	561365	565549
24	श्री सुरेन्द्रकुमार जैन ओसवाल सोप 175, चाँदपोल बाजार	,,	64657	42689
25	श्री ज्ञानचन्द्र भण्डारी मारूजी का चौक एम एस वी का रास्ता	,,		

श्री जैन श्वे. तपागच्छ संघ, जयपुर

गच्छाधिपति पू. आचार्य श्रीमद् विजय इन्द्रदिन्न सूरीश्वरजी मा. सा. के वर्ष 1991 के जयपुर चातुर्मास में संघ पर किए गए उपकारों पर कृतज्ञता ज्ञापनार्थ श्री संघ की ओर से 'समाजोद्धारक' पदवी प्रदान समारोह के अवसर पर सादर समर्पित अभिनन्दन पत्र मूल रूप में उद्धृत किया गया है ।

—संघ मन्त्री

जैन दिवाकर, चारित्र चूड़ामणि, परमार क्षत्रियोद्धारक वर्तमान गच्छाधिपति आचार्य श्रीमद् विजय इन्द्रदिन्न सूरीश्वरजी महाराज के दीक्षा स्वर्ण जयन्ती वर्ष में

"समाजोद्धारक"

पदवी प्रदान समारोह के अवसर पर जयपुर श्रीसंघ की ओर से आचार्यश्री के कर-कमलों में सविनय सादर समर्पित

अभिनन्दन-पत्र

परमपूज्य आचार्य प्रवर :

विश्व विख्यात गुलाबी नगरी जयपुर में जैन श्वेताम्बर तपागच्छ परम्परा के आचार्यप्रवर श्री आत्म-वल्लभ-समुद्र गुरुवर्य की पाट परम्परा के वर्तमान गच्छाधिपति आचार्य श्री विजय इन्द्रदिन्न सूरीश्वरजी महाराज के दीक्षा स्वर्ण जयन्ती वर्ष में चातुर्मास हेतु पर [illegible] हर्षोल्लासित है । जयपुर श्रीसंघ का यह परम सौभाग्य रहा है कि आचार्य श्री पावन सान्निध्य [illegible] हस्तिनापुर में उपधान तप तथा महान [illegible] और [illegible] समारोह सम्पन्न करा कर हमारी आशा [illegible] [illegible] पश्चात् भी [illegible] में [illegible] [illegible] मधुर वाणी से [illegible] किया ।

जिन शासन के प्रभावक आचार्य

विराट् व्यक्तित्व के धनी आचार्य श्री आप अक्षय गुणो के सागर हैं। आपश्री के गुणो का वर्णन हमारी सामर्थ्य के बाहर है फिर भी आपश्री द्वारा किये गये जैन धर्म, दर्शन, कला, सस्कृति, साहित्य के प्रचार-प्रसार तथा जनहितार्थ अविस्मरणीय कार्यों का उल्लेख कर हम आपश्री के अभिनन्दन मे नत-मस्तक है।

गुजरात प्रात के पचमहाल क्षेत्र मे लाखो परमार क्षत्रियो को व्यसन मुक्त करके उन्हे जैन धर्म की ओर प्रवृत्त कर आपश्री ने शासन की अभिवृद्धि मे उल्लेखनीय योगदान किया है। आपश्री की प्रेरणा से आज भी इस क्षेत्र के ३ हजार से भी अधिक ग्रामो मे जैन धर्म और सस्कृति के व्यापक प्रचार-प्रसार का कार्य हो रहा है। आपश्री की प्रेरणा से परमार क्षत्रिय समाज के व्यक्ति जैन धर्म की ओर आकर्षित ही नही हुए अपितु इस क्षेत्र के ११५ मुमुक्षु भाई-बहिन जैन भागवती दीक्षा अगीकार कर सयम मार्ग की ओर प्रवृत्त हुये। साथ ही लाखो व्यक्ति व्यसन त्याग कर सुखी जीवन की ओर बढे है। इस क्षेत्र मे ५५ जिनालय स्थापित हुए। सैकडो ग्रामो मे बालक-बालिकाओ की धार्मिक शिक्षा हेतु पाठशालाये सचालित हैं।

आपश्री ने जैन धर्म प्रभावना हेतु पजाब, राजस्थान, हरियाणा, गुजरात, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, बिहार, बगाल, कर्नाटक तथा जम्मू-कश्मीर आदि राज्यो मे अब तक ७५ हजार किलोमीटर से भी अधिक दूरी की पदयात्रा कर अहिसा और अपरिग्रह का प्रचार करते हुए श्रद्धालुओ को व्यसन मुक्त रहने की प्रेरणा दी।

तीर्थ प्रेमी

तीर्थंकर श्री मुनिसुव्रत स्वामी के समय के प्राचीन तीर्थ पावागढ का अभ्युदय और विकास आपश्री की प्रेरणा से सम्भव हुआ। बोडेली, आकोला, कागडा, हस्तिनापुर आदि तीर्थों के उत्थान और विकास मे आपश्री का सक्रिय सहयोग रहा है। देश की राजधानी दिल्ली मे "वल्लभ स्मारक" की भव्य प्रतिष्ठा, मुरादाबाद मे स्वर्गीय आचार्य श्रीमद् विजय समुद्रसूरिजी का समाधि मन्दिर, जगाधरी मे नूतन जिनालय, विजय इन्द्र नगर (लुधियाना) मे श्री पार्श्वनाथ स्वामी का भव्य जिनालय आदि आपश्री की प्रेरणा व कृतित्व के ऐसे स्तम्भ हैं जो युगो-युगो तक जैन धर्म की ध्वजा को लहराते रहेगे।

समाजोत्कर्ष हेतु अग्रणीय आचार्य

आपश्री क्रातिकारी युगदृष्टा आचार्य है। अपने पूर्ववर्ती आचार्यो द्वारा बताये गये मार्ग पर अग्रसर रहकर सेवा, शिक्षा, साधर्मी उत्कर्ष, सगठन, स्वास्थ्य और स्वावलम्बन की दिशा मे किये जा रहे कार्यो के प्रति सदैव समाज आपश्री का ऋणी रहेगा। गुरुभक्तो को प्रेरित कर आपश्री ने समाजोत्थान की जिन योजनाओ को "वल्लभ

स्मारक" के माध्यम से संचालित कराया, वे सभी बेजोड है। आपश्री की प्रेरणा से ही परम गुरुभक्त श्री अभयकुमार ओसवाल ने साधर्मी भाइयों के उत्थान की दिशा में लुधियाना में विजय इन्द्र नगर जैसी महत्त्वशाली योजना को मूर्त्तरूप दिया जिसमें ७५० परिवारों को निःशुल्क आवास आवंटन कर इन परिवारों को रोजगार भी सुलभ कराया गया।

महातपस्वी आचार्य :

आदर्श संयमी, सत्य, अहिंसा और प्रेम की साक्षात् मूर्ति आचार्य श्री ने अनेक दीर्घ तपस्यायें करके समाज को भी तपश्चरण की ओर आकर्षित किया। ७० वर्ष की आयु में भी आपश्री निरन्तर तप-जप में लीन रह कर आत्मोद्धार के साथ ही यथा नाम अपनी पंचेन्द्रियों पर विजय प्राप्त कर महातपस्वी साधक हैं। आपश्री वर्धमान तप की ५१वीं ओली की आराधना पूर्ण कर चुके हैं। आपश्री के तपस्वी जीवन से प्रेरित होकर ही हजारों गुरुभक्त अब तपस्या के क्षेत्र में भी आगे आये हैं।

धन्य हुआ ये नगर हमारा :

साधु-साध्वी मण्डल सहित आचार्य श्री के जयपुर आगमन पर जैन नगरी की धरा पवित्र हो गई। आपश्री की कलमष रहित पीयूषमयी अमृतवाणी, जिनवाणी के उपदेश तथा समाज को दिये गये मार्गदर्शन के फलस्वरूप अनेक भव्य आत्मायें धर्म मार्ग पर आरूढ़ हुई हैं। आपश्री की निश्रा में सम्पन्न नव विकसित उप नगर मालवीया नगर में शंखेश्वरम् पार्श्वनाथ जिनालय की प्रतिष्ठा हमें युगों-युगों तक आपश्री की स्मृति कराती रहेगी। एक अन्य उप नगर सोडाला में आपश्री की प्रेरणा से जिनालय निर्माण की योजना को मूर्त्तरूप दिया जा रहा है। पर्वाधिराज पर्युषण की पावन वेला में आपश्री की प्रेरणा से श्रीसंघ द्वारा "श्री विजय समुद्र इन्द्र सूरजी साधर्मी सहायता कोष" की स्थापना हुई है।

धर्म अभिवृद्धि के अतुलनीय प्रयास :

जयपुर के उपनगरों में आपश्री ने प्रवास कर, सोडाला में साध्वी मण्डल को चातुर्मास की आज्ञा देकर, आपश्री की निश्रा में सिद्धाचल की भाव यात्रा, मालवीय नगर में सामायिक, शंखेश्वरम् पार्श्वनाथ जिनालय तक चतुर्विध संघ के साथ पद यात्रा, आदर्श नगर तक चैत्य परिपाटी आदि अनेक आयोजन हुये हैं जिससे धर्म की [illegible] प्रभावना के साथ ही धर्म अभिवृद्धि भी हुई है।

आपश्री की प्रेरणा से प्रारम्भ [illegible] निर्माण [illegible] के माध्यम से [illegible] व्यक्तित्व-कृतित्व, जैन धर्म, दर्शन, कला और संस्कृति को [illegible] [illegible], [illegible] [illegible] हुई है।

जैन ऐक्य और समन्वय को समर्पित

आचार्यत्रय की परम्परा को और आगे बढाते हुए जयपुर मे आयोजित जैन एकता सम्मेलन मे आपश्री ने समान आसन पर विराजित होकर आदर्श उदाहरण प्रस्तुत किया। आपश्री की इस उदारता एव सहृदयता का उपस्थित सभी जैन सम्प्रदायो के साधु-साध्वी मण्डल पर अनुकरणीय प्रभाव पडा और श्रावक वर्ग धन्य-धन्य कह उठा।

महान् ज्योतिर्धर आचार्य श्री आपने जयपुर श्री सघ को चातुर्मास का सुअवसर प्रदान किया, इस उपकार मे हम कदापि उऋण नही हो सकते। जयपुर श्रीसघ आपश्री के चरणो मे नत-मस्तक होकर यही भावना करता है कि आचार्यश्री आपकी आशीर्वाद रूपी छत्र-छाया सदैव हम पर बनी रहे।

श्री आत्म वल्लभ समुद्र गुरु परम्परा के श्रेष्ठ सवाहक के रूप मे कई अधूरे कार्य आपश्री के कर-कमलो से पूर्ण हुए ह एव पूर्णता की ओर अग्रसर है। आपश्री के उदात्त व्यक्तित्व, गौरवमय कार्य, अद्वितीय देन को शब्दो की सीमा मे बाधना असम्भव ही नही दुष्कर काय है।

श्रद्धा, भक्ति व विनय के साथ आपश्री के गुणो की वन्दना करते हुए समाजोद्धार की दिशा मे किये कार्यो के प्रति समर्पित होकर आपश्री को **"समाजोद्धारक"** की पदवी से अलकृत कर हम अपने आप को गौरवान्वित अनुभव कर रहे हैं।

शत-शत वन्दन ! शत-शत अभिनन्दन !

मिगसर वदी २, वीर निर्माण स २५१८ — हम हैं आपके चरणानुरागी

शनिवार, २३ नवम्बर, १९९१ — **श्री जैन श्वेताम्बर तपागच्छ सघ, जयपुर**
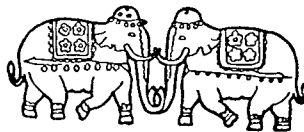
तीन की महिमा

ज्ञान-दर्शन चारित्र त्राणि मोक्ष मार्गः

☐ श्री केसरीचन्द सिंघी

तीन चीजें किसी का इन्तजार नहीं करती—
समय, मौत, और ग्राहक।

तीन बातें वापिस नहीं आती—
कमान से निकला तीर, जुबान से निकली बात और
शरीर से निकले प्राण।

तीन चीजे जीवन में एक बार मिलती हैं—
माँ, बाप, और जवानी।

याद रखने योग्य तीन बातें—
कर्ज, फर्ज और मर्ज।

तीन का हमेशा सम्मान करो—
माता, पिता और गुरु।

जीवन में तीन बातों का व्यवहार करने से उन्नति मिलती है—
ईश्वर, मेहनत और विद्या।

त्यागने योग्य तीन बातें—
हीनभावना, निन्दा और स्वार्थ।

तीन बातों पर नियन्त्रण करें—
काम, क्रोध और वासना।

आदर्श जीवन के लिये तीन बातें—
सद्भावना, दूसरों का सम्मान और [illegible]।

तीन का भरोसा मत करो—
[illegible], [illegible] और [illegible]।
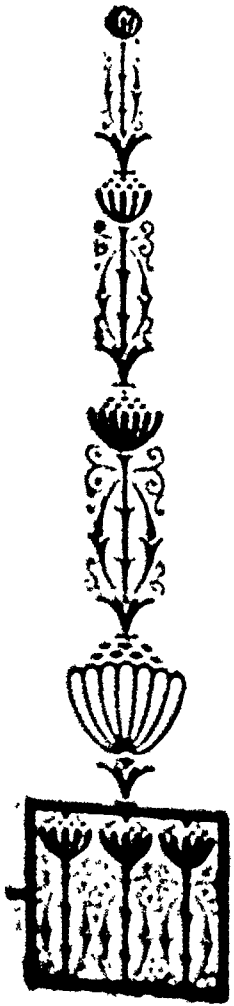
श्री वर्द्धमान आयम्बिल शाला की स्थायी मितियां

गुप्त हस्ते विमला बाई	५०१ ००
गुप्त हस्ते विमला बाई	५०१ ००
स्व श्रीमती सरस्वती बहन	५०१ ००
श्रीमती मनोहर कँवर	५०१ ००
श्री सतपालजी	५०१ ००
श्री कान्तीलालजी रतीलालजी	५०१ ००
श्री जयन्तीलाल गगलभाई	५०१ ००
श्रीमती अकल कवर भण्डारी	१५१ ००
श्री नन्दलालजी दूगड	१५१ ००
श्री केशरीमलजी मेहता	१५१ ००
श्री विजयराजजी लल्लुजी	१५१ ००
श्री हीराचन्दजी कोठारी	१५१ ००
श्री फतेहचन्दजी लोढा	१५१ ००
श्री ताराचन्दजी कोठारी	१५१ ००
श्री सौभाग्यचन्द्रजी बाफना	१५१ ००
श्री सुशील कुमारजी	१५१ ००
श्री अनिल कुमारजी	१५१ ००
श्री कानमलजी	१५१ ००
श्री पुष्पमलजी	१५१ ००
श्री इन्दरचन्दजी गोपीचन्दजी चोरडिया	१५१ ००
श्री नन्दलाल हीराचन्द शाह	१५१ ००
श्री सुनीलकुमार अनिलकुमार बाफना	१५१ ००
श्री ज्ञानचन्दजी सुभाषचन्दजी छजलानी	१५१ ००
श्री ओम शान्ति	१५१ ००
श्री कुशलराजजी सिंघवी	१५१ ००
श्री ज्ञानचन्दजी खारेड	१५१ ००
सिंघवी नागर दास उगम सी	१५१ ००
श्री राजमलजी सिंघी	१५१ ००

इस वर्ष के अब तक के ज्ञातव्य विशिष्ठ तपस्वी

श्री बाबूलालजी जैन	मास क्षमण
श्रीमती उगम कंवर बाई धर्म पत्नी श्री लक्ष्मीचन्दजी तालेड़ा	मास क्षमण
श्रीमती सुशीलादेवी छजलानी धर्मपत्नी श्री सुभाषचन्दजी छजलानी	मास क्षमण
समोसरण तप— श्रीमती चांदकंवर बाई धर्म पत्नी श्री कुशलराजजी सिंघी	(जारी है)

वृद्धावस्था—एक स्वरूप यह भी

□ श्री रतनलाल रॉय सौनी जैन चावल चीनी वाले

बचपन खेल में खोया,

जवानी भर ऐश से सोया ।।

देख बुढ़ापा रोया ।।

आंखों से दिखे नहीं । कानन् से सुणयों नहीं जाय ।

मुख में दन्त पंक्ति नहीं । भोजन कैसे खायो जाय ।।

भुजा बोझ सहारे नहीं । अंगुलियां मुड़ न पाय ।।

कटि की बस कड़-कड़ करे । कमर झुकी अधिकाय ।।

घुटनन् में सोजन रहे । पगतल आंटन् जागे ।।

सब शरीर कम्पित रहे । दिल की धड़कन् होय ।।

उठ्यो बैठ्यो नही जात है । सब तन जोड़न् रोग ।।

इस जीरण तन मन्दिर में, अब रहना नहीं योग ।।

हाड़ मांस सब सूख गये है । रुधिर रह तन में कुछ नहीं ।।

गन्दा बांस निकसे नहीं भाई । तन का दर्द सहयो नहीं जाय ।।

प्रिय जन घिरणा करे । नीके देखे नहीं [illegible] ।।

प्रिय सखा नारी मसखरा करे । आप [illegible] ।।

धन से सब कुछ नहीं

□ श्री केसरीचन्द सिंघी

धन से भीड इकट्ठी की जा सकती है, श्रावक नही ।
धन से समाज खरीदा जा सकता है, धर्म नही ।
धन से ऐनक खरीदी जा सकती है, आँख नही ।
धन से औरत खरीदी जा सकती है, माँ नही ।
धन से आदमी खरीदा जा मकता है, आत्मा नही ।
धन से पुस्तके खरीदी जा सकती है, ज्ञान नही ।
धन से चापलूस खरीदे जा सकते है, मित्र नही ।
धन से पद खरीदा जा सकता है, योग्यता नही ।
धन से प्रेमी खरीदा जा सकता है, सच्चा प्यार नही ।
धन से बिस्तर खरीदा जा सकता है, नीद नही ।
धन से भोजन खरीदा जा सकता हे, भूख नही ।
धन से पहरेदार खरीदे जा सकते है, वफादार नही ।
धन से घडी खरीदी जा मकती है, समय नही ।

आयम्बिल-शाला में सहयोग कर्ता

फोटो	भेंटकर्त्ता
स्व श्री सूरजराज मोहनोत	पुत्र हनवन्तराज प्रसन्नराज मोहनोत एवम् परिवार
श्री मानमलजी कोठारी	धर्मपत्नी श्रीमती जतनदेवी कोठारी पुत्र त्रिलोकचन्द राजेन्द्रकुमार कोठारी
स्व श्रीमती सरस्वती बहन	पुत्र प्रकाश शाह, प्रपफुल शाह, प्रदीप शाह एवम् शाह परिवार
स्व श्रीमती दुर्गादेवी जैन	श्री शादीलाल कमलकुमार जैन
स्व श्री शातीलालजी जैन (बैगानी)	धर्मपत्नी श्रीमती ज्ञानदेवी
स्व जयश्री धर्मपत्नी महेन्द्र कुमार जेठालाल मेहता	महेन्द्रकुमार मेहता कु पिन्की मेहता विक्की मेहता
स्व मदन सिहजी बावेल	श्री फतेहसिह बावेल पुत्र प्रमोद एवम् प्रवीण बावेल
स्व श्रीमती केशर बाई बावेल	श्री फतेहसिह बावेल पुत्र प्रमोद एवम् प्रवीण बावेल
स्व श्री विमलचन्दजी जैन	श्री धर्मचन्द जैन परिवार मै मियर इण्डिया, दिल्ली
मजुना बहन	प्रगना सतीश शाह
स्व श्री बुद्धसिहजी वैद	श्री हीराचन्दजी वैद एवम् परिवार

श्री जैन श्वे० तपागच्छ संघ, जयपुर

वार्षिक कार्य-विवरण वर्ष १९९१-९२

(महासमिति द्वारा अनुमोदित)

□ मोतीलाल भड़कतिया, संघ मंत्री

महानुभावो !

जिन शासन शिरोमणि आचार्य भगवन्त श्री आत्म-कमल-लब्धि की पाट परम्परा के तपोविभूति आचार्य श्री नवीन सूरीश्वर जी म० सा० के शिष्य रत्न शान्त मूर्ति, प्रवचन प्रभावक आचार्य श्रीमद् विजय हिरण्यप्रभ सूरीश्वर जी म० सा०, मुनिराज श्री भाग्य शेखर विजय जी म० सा० एवं मुनिराज श्री भाग्यपूर्ण विजय जी म० सा० आदि ठाणा ३ एवं सभी साधर्मी भाइयों एवं बहिनों !

वर्ष १९९१-९२ के लिए कार्यरत महासमिति की ओर से यह दूसरा वार्षिक प्रतिवेदन लेकर मैं आपकी सेवा में उपस्थित हूँ।

विगत चातुर्मास :

इससे पूर्व कि मैं वर्ष १९९१-९२ का कार्य विवरण एवं लेखा-जोखा प्रस्तुत करूँ आपका ध्यान विगत वर्ष के सम्पन्न हुए चातुर्मास की तरफ [illegible] करना चाहता हूँ। पिछले वर्ष जयपुर श्रीसंघ के प्रबल पुण्योदय से [illegible] श्रीमद् विजय इन्द्रदिन्न सूरीश्वर जी म० सा० आदि ठाणा १३ एवं साध्वी श्री [illegible] म० सा० आदि ठाणा ९ एवं साध्वी श्री [illegible] जी म० आदि ठाणा [illegible] हुआ था। पर्यूषण पर्व तक की गतिविधियों का विवरण [illegible] किया जा चुका है। अब तत्पश्चात् की गतिविधियों [illegible]

[illegible]

प्रेरणा एव मागदर्शन से 'श्री समुद्र इन्द्रदिन सार्धर्मी सेवा कोष' की स्थापना की गई। स्वप्नोजी आदि बोलियो सहित सभी मीगो की आवक मे पिछली सभी सीमाओ को लाघकर कीर्तिमान स्थापित हुए। बेले एव इमसे ऊपर की तपस्या करने वालो के पारणे का लाभ श्रीमती भीखीबाई बैद बीकानेर वालो ने लिया।

पर्युपण पर्व की समाप्ति के पश्चात् पर्युपण पर्व की भव्यातिभव्य, अभूतपूर्व विविध तपाराधना के अनुमोदनार्थ एव आचार्यदेव श्रीमद् विजय वल्लभ सूरीश्वर जी म सा की ३७वी पुण्य तिथि, श्रीमद् विजय समुद्र सूरीश्वर जी मा के जन्म शताब्दी तथा वर्तमान गच्छाधिपति गुरुदेव की दीक्षा स्वर्ण जयन्ती निमित्त एकादशाह्निका महोत्सव का दि० ३ से १३ अक्टूबर, १९९१ तक भव्य आयोजन सम्पन्न हुआ जिसमे विभिन्न प्रकार की पूजाओ के साथ श्री पार्श्व-पद्मावती महापूजन, श्री बीसस्थानक महापूजन, श्री वृहद् शान्ति स्नात्र महापूजन पढाई गई।

श्री कुमारपाल की भव्य आरती के वरघोडा का जयपुर मे प्रथम बार आयोजन हुआ। श्री इन्दरचन्द जी बाबूलाल जी बैराठी ने इसका लाभ लिया। उनके निवास स्थान से आप कुमारपाल के प्रतीक के रूप मे चतुर्विध सघ के साथ भव्य वरघोडे मे श्री सुमतिनाथ जिनालय पधारे जहाँ पर सामूहिक आरती का आयोजन था। सभी सार्धर्मी भाई बहिन अपने-अपने घरो मे दीपक लेकर इस आरती मे सम्मिलित हुए।

पूज्य साध्वी श्री सद्गुणाश्रीजी ने ६१ एव ६२वी वर्धमान आयम्बिल ओलीजी की तपस्या पूण की तथा साध्वी श्री हर्षिष्ठाश्री जी के महा धन तप, साध्वी श्री जीतयशा श्री जी के समवरण तप, साध्वी श्री कल्पपूर्णा श्री जी म० सा० की ५०० आयम्बिल की तपस्याये भी यही पर पूण हुई। तपस्विनी साध्वी म० सा० के पारणे कराने का लाभ श्री बाबूलाल तरसेमकुमार पारख परिवार की ओर से लिया गया।

जयपुर शहर के चारो ओर उपनगरीय बस्तियो के विकास से प्रतिदिन शहर मे आने जाने की कठिनाई तथा क्षेत्र के लोगो को भी धर्म आराधना का लाभ प्राप्त होता रहे, इसी दृष्टि से आचाय भगवन्त की आज्ञा से साध्वी श्री यशकीर्ति श्री जी म सा आदि ठाणा ४ ने सोडाला उप-नगर मे चातुर्मास किया। इस हेतु श्रीमान् हरिश्चन्द्र जी बडेर ने अपना बगला उपलब्ध कराया तथा धातु की प्रतिमाजी यहा विराजित कर धर्माराधना की व्यवस्था की गई। साध्वी जी म० सा० के ओजस्वी प्रवचन एव प्रेरणा से सम्पूर्ण चातुर्मास काल मे धम ध्यान, त्याग, तपस्या सहित उल्लासमय वातावरण बना रहा। दि० १६-१०-९१ को सक्रान्ति महोत्सव भी सोडाला उपनगर मे ही सम्पन्न हुआ जिसका सम्पूर्ण लाभ स्थानीय भाई-बहिनो द्वारा लिया गया।

इससे पूर्व पर्युपण समाप्ति के पश्चात् प्रथम क्षमापना सक्रान्ति का आयोजन दि० १७-९-९१ को गुजराती समाज मे हुआ। इस अवसर पर आयोजित धर्म सभा मे

• श्री हीरासिंह चौहान, उपाध्यक्ष, राजस्थान विधान सभा, जयपुर मुख्य अतिथि तथा श्री बी० डी० कल्ला, पूर्व शिक्षा मंत्री, राजस्थान विशिष्ट अतिथि थे। संक्रांति के अवसर पर बाहर से पधारे हुए अतिथियों सहित स्थानीय साधर्मी भाई बहिनों की भक्ति तथा साधर्मी वात्सल्य का लाभ श्री मंगलचंद ग्रुप द्वारा लिया गया। चातुर्मास काल की अंतिम संक्रांति का लाभ दिनांक १६-११-९१ को श्री जैन श्वेताम्बर संघ, जवाहर नगर द्वारा लिया गया। सभी संक्रांतियाँ बहुत ही उल्लासमय वातावरण में मनाई गई।

दि० २०-१०-९१ को आचार्य भगवन्त चैत्य परिपाटी हेतु चतुर्विध संघ के साथ संखेश्वरम् पार्श्वनाथ जिनालय, मालवीया नगर पधारे। यहाँ पर सार्वजनिक सभा का आयोजन किया गया जिसके मुख्य अतिथि मा० श्री शांतिलाल चपलोत, गृह राज्य मंत्री थे। साधर्मी वात्सल्य का लाभ श्री हीराचन्द जी मोतीचन्द जी बैद परिवार ने लिया।

दि० २६-१०-९१ को आप चतुर्विध संघ के साथ श्री विमलनाथ स्वामी जिनालय आदर्शनगर में पधारे जहाँ आपकी निश्रा में अट्ठारह अभिषेक सम्पन्न हुए। 'अक्षयराज' में आपका प्रवचन हुआ तथा साधर्मी भक्ति का लाभ श्री बाबूलाल नरेशकुमार पारख परिवार की ओर से लिया गया।

प्रतिदिन अनेक घरों में पधार कर आचार्य भगवन्त ने पगलिए करके उन्हें कृतार्थ किया।

दि० २९-१०-९१ से ३१-१०-९१ तक पू० आचार्य भगवन्त के ६९वें जन्म दिवस पर त्रि-दिवसीय अभिनन्दन समारोह का आयोजन किया गया। संघ के अध्यक्ष श्री हीराभाई चौधरी ने दीप प्रज्वलित कर समारोह का शुभारम्भ किया। धर्म सभा के मुख्य अतिथि श्री कस्तूरीलाल जैन, अम्बाला वाले थे। दि० ३०-१०-९१ को 'समाज के उत्थान में आत्म-वल्लभ-समुद्र गुरु परम्परा का योगदान' विषयक विचार गोष्ठी हुई जिसके मुख्य अतिथि राजस्थान के भूतपूर्व मुख्यमंत्री श्री हीरालाल देवपुरा तथा प्रमुख वक्ता श्री उमरावचन्द जी सा० बहेर, संघमंत्री खरतरगच्छ संघ, जयपुर थे। दिन में मंगलचन्द ग्रुप की ओर से पूजा पढ़ाई गई। रात्रि को भक्ति संध्या का आयोजन किया गया जिसके मुख्य अतिथि श्री राजकुमार जी जैन, फरीदाबाद वाले थे। दि० ३१-१०-९१ को अभिनन्दन का मुख्य समारोह हुआ जिसके मुख्य अतिथि मा० श्री हरिशंकर भाभड़ा, अध्यक्ष, राजस्थान विधान सभा तथा विशिष्ट अतिथि श्री [illegible] चन्द जी जैन, दिल्ली थे। दिन में श्री बाबूलाल नरेशकुमार पारख परिवार की ओर से [illegible] महापूजन पढ़ाई गई। रात्रि को श्री [illegible] जैन [illegible] मण्डल, जयपुर द्वारा 'जम्बू स्वामी' नाटक का मंचन किया गया जिसके मुख्य अतिथि श्री [illegible] जैन महासभा उत्तरी भारत के प्रधान श्री [illegible] जी थे। [illegible] [illegible] में [illegible] कलाकारों द्वारा मंचित इस नाटक की [illegible] हुई तथा [illegible] में तथा अन्य स्थानों पर श्री [illegible] करवाई गई। [illegible]

देकर प्रोत्साहित किया गया। इस त्रिदिवसीय समारोह के मध्य रक्तदान शिविर, अनाथालय मे भोजन वितरण, जीवो को अभयदान आदि जन कल्याणकारी कार्य एव श्री आत्मानन्द जैन सेवक मण्डल, जयपुर द्वारा पावापुरी तीर्थ की झांकी भी आयोजित की गई।

ओलीजी की आराधनाये, दीपावली महोत्सव आदि पर्व आचार्य भगवन्त की पावन निश्रा मे सानन्द सम्पन्न हुए। सम्पूर्ण चातुर्मास काल मे प्रतिदिन प्रवचन, धर्म आराधनायें, प्रतिदिन के प्रवचन मे प्रभावनाओ का वितरण आदि अनेक चिरस्मरणीय आयोजन सम्पन्न होते रहे। पूर्ववत् क्रमिक अट्ठम की तपस्या करने वाले तपस्वियो का बहुमान किया गया। सघ की ओर से चाँदी के सिक्के तथा मगलचन्द ग्रुप की ओर से पृथक से आराधना के उपकरण आदि भेट कर बहुमान किया गया।

चातुर्मास समाप्ति का समय ज्यो-ज्यो नजदीक आ रहा था, लोगो के मन विछोह की आशका से उद्वेलित थे लेकिन समय किसी की प्रतीक्षा नही करता, काल चक्र निरन्तर चलता ही रहता है। आखिर वह समय आ ही गया जबकि आचार्य भगवन्त सहित सभी मुनि मण्डल एव साध्वी जी म० सा० को जयपुर मे विहार करना था। दि० २१-११-९१ को चातुर्मास परिवर्तन का लाभ श्रीमान् उमरावमल जी पालेचा परिवार ने लिया।

आचार्य भगवन्त के इस यशस्वी, चिरस्मरणीय एव कीर्तिमान युक्त चातुर्मास के प्रति श्रीसघ की ओर से कृतज्ञता ज्ञापनार्थ दि० २३-११-९१ को अभिनन्दन समारोह का आयोजन किया गया। इस समारोह मे आचार्य भगवन्त के प्रति अपनी कृतज्ञता स्वरूप श्रीसघ की ओर से उन्हे "समाजोद्धारक" की पदवी प्रदान करते हुए अभिनन्दन पत्र प्रस्तुत किया गया। इस अवसर पर चातुर्मास को सफलतापूर्वक सम्पन्न कराने मे सहयोगी बन्धुओ का बहुमान किया तथा माल्यार्पण एव स्मृति चिह्न भेट कर उनके सहयोग एव कमठ सेवाओ एव सहयोग के लिए आभार व्यक्त किया गया। इस श्रीसघ के सहयोगियो विभिन्न उप समितियो के सयोजको, महासमिति के युवा पदाधिकारियो, श्री आत्मानन्द जैन सेवक मण्डल, जयपुर के कार्यकर्ताओ सहित श्रीमान् दुलीचन्द जी सा० टाक (टाक धर्मशाला के लिए), श्रीमान् हरिश्चन्द्र जी सा० बडेर (मोडाला म साध्वी जी म सा के चातुर्मास मे अपना बगला प्रदान कर उसमे प्रतिमाजी आदि रख कर धर्माराधना मे सहयोग प्रदान करने के लिए), श्रीमान् उत्तमचन्द जी सा० बडेर सघ मत्री श्री खरतरगच्छ सघ, जयपुर (सभी कार्यक्रम एव व्यवस्थाओ मे सहयोग के लिए) श्री प्रदीपकुमार जी सा० ठोलिया (ठोलिया धर्मशाला के लिए) का बहुमान कर स्मृति चिह्न भेंट किए। आचार्य भगवन्त को कामली वोहराई गई।

रविवार दि० २४-११-९१ को प्रात आचार्य भगवन्त, मुनिमण्डल एव साध्वी जी म० ने चातुर्मास पूर्ण कर जयपुर से विहार किया। प्रथम पडाव मे आप सघ के

अध्यक्ष श्री हीराभाई चौधरी के निवास स्थान पर पधारे जहाँ पर धर्म सभा हुई तथा संघ भक्ति का लाभ मंगलचन्द ग्रुप की ओर से लिया गया। अगले दिन मोडाना में प्रवास के पश्चात् आपने अजमेर की ओर विहार किया। साध्वी श्री पद्मलताश्री जी म० आदि ठाणा ने नागेश्वर तीर्थ की यात्रार्थ कोटा की ओर विहार किया।

जयपुर से तो आपको अश्रुपूरित भावभीनी विदाई दी ही गई। अजमेर तक के मार्ग में भी प्रतिदिन श्रद्धालुगण आपकी सेवा में उपस्थित होते रहे। अजमेर में आपकी पावन निश्रा में आयोजित श्री पंजाब केसरी वल्लभ गुरु की मूर्ति के अनावरण, आराधना हाल का उद्घाटन एवं संक्रान्ति महोत्सव के अवसर पर दि० १६-१०-९१ को बहुत बड़ी संख्या में जयपुर श्रीसंघ के साधर्मी बन्धु उपस्थित हुए। मूर्ति भराने का लाभ मंगलचन्द ग्रुप ने लिया। वेदी निर्माण हेतु जयपुर श्रीसंघ की ओर से १५,०००) रु० की राशि उपलब्ध कराई गई।

अन्य संक्रांतियों सहित गोपालपुरा (सुजानगढ़) में सम्पन्न प्रतिष्ठा महोत्सव के अवसर पर भी बस लेकर यात्रीगण उपस्थित हुए तथा दि० १३ व १४ जून, ९२ को पाली में आयोजित दीक्षाएँ एवं आचार्य श्री समुद्रसूरी जी म० की जन्म शताब्दी तथा वर्तमान गच्छाधिपति की दीक्षा, स्वर्ण जयन्ती तथा संक्रांति महोत्सव पर भी बस लेकर पाली उपस्थित हुए।

इस प्रकार विगत चातुर्मास में सम्पन्न हुए विभिन्न आयोजनों में से कुछेक का तथा भक्तिकर्ताओं, सहयोगियों आदि में से प्रसंगवश कुछेक का ही नामोल्लेख हो सका है। सहासमिति श्रीसंघ के समस्त सदस्यों के प्रति हार्दिक धन्यवाद एवं आभार व्यक्त करती है जिनके कारण यह सब सम्भव हो सका था।

वर्तमान चातुर्मास :

आचार्य भगवन्त के विहार के पश्चात् इस वर्ष के चातुर्मास हेतु अनेक आचार्य भगवन्त, मुनिगण, साध्वी जी म० सा० से व्यक्तिगत एवं पत्र व्यवहार द्वारा सम्पर्क स्थापित किया गया। इसी बीच विराजित आचार्य भगवन्त अपने शिष्यरत्न मुनि श्री [illegible] जी म० सा० के [illegible] के कारण हेतु हस्तिनापुर जाने के क्रम में जयपुर पधारे। आपसे भी विनती की गई तथा संघ के समस्त [illegible] ने आपसे विनती से पुनः सम्पर्क किया। [illegible] मंत्री श्री सुरेन्द्रकुमार मेहता, चातुर्मास समिति के संयोजक श्री [illegible] जी [illegible] तथा श्रीसंघ [illegible] हस्तिनापुर में उपस्थित हुए। [illegible] पर आपने [illegible] चातुर्मास जयपुर में करने की स्वीकृति प्रदान की [illegible] गई।

दि० [illegible] को आपने हस्तिनापुर से विहार किया [illegible]

नगर प्रवेश मे पूर्व आप मोहनवाडी, जवाहरनगर, मालवीयानगर, आदर्शनगर आदि विभिन्न कॉलोनियो मे विराजे तथा धर्मोपदेशो से लोगो को लाभान्वित किया।

दि० २ जुलाई, १९९२ को आपका चातुर्मास हेतु भव्य नगर प्रवेश हुआ। चैम्बर भवन पर समैय्या करने के पश्चात्, न्यू गेट से प्रवेश कर आप राजमार्गो पर विचरण करते शोभायात्रा के साथ आत्मानन्द जैन सभा भवन पधारे। इस अवसर पर आयोजित धर्म सभा मे मा० श्री हीरासिह चौहान, उपाध्यक्ष राज० विधान सभा मुख्य अतिथि थे। आचार्य भगवन्त ने उपस्थित जन समुदाय को उद्बोधन दिया। इस अवसर पर सामूहिक आयम्बिल की आराधना एव दिन मे श्रीमान् किस्तूरमल जी सा० शाह परिवार की ओर से श्री पार्श्वनाथ पच कल्याणक पूजा पढाई गई।

आराधनायें

आपके शुभागमन के साथ ही प्रतिदिन प्रवचन का कार्यक्रम प्रारम्भ हो गया। दि० १६-७-९२ को 'श्री गौतम पुच्छ' ग्रथ भेंट किया गया जिस पर आपका प्रतिदिन प्रवचन चल रहा है। सामूहिक आयम्बिल की आराधनाओ सहित अनेक तपस्यायें सम्पन्न हुई हैं। प्रति रविवार को बाल सस्कार शिविर चल रहा है जिसका सयोजन स्वय आचार्य भगवन्त कर रहे है। अब पर्वाधिराज पर्युषण महापर्व की मगलमय आराधनायें आपकी पावन निश्रा मे सम्पन्न हो रही हैं।

साधु-साध्वी वर्ग का शुभागमन, वैय्यावच्छ, गुरु एव सघ भक्ति

विगत चातुर्मास काल तथा तत्पश्चात् समय-समय पर बाहर से पधारे हुए साधर्मी भाइयो, सामूहिक रूप से पधारे हुए यात्री सघो की भक्ति का लाभ श्रीसघ को प्राप्त हुआ है।

इस बीच निम्नाकित साधु साध्वीगण जयपुर पधारे जिनके वैयावच्छ सहित अगले मुकाम तक पहुँचाने आदि की व्यवस्था का लाभ भी सघ को प्राप्त हुआ है —

(१) मुनि श्री विमलविजय जी म सा आदि ठाणा २
(२) साध्वी जी भव्यगुणाश्री जी „ ६
(३) साध्वी श्री चन्द्रयशाश्री जी „ ६
(४) साध्वी श्री महाप्रज्ञाश्री जी „ ५
(५) मुनि श्री कीर्तिप्रभ विजय जी „ २
(६) मुनि श्री राजेन्द्र विजय जी
(७) मुनि श्री न्यायवर्धन सागर जी „ ३
(८) मुनि श्री नेमीचन्द विजय जी
(९) साध्वी श्री अमीयशाश्री जी „ ३

राजस्थान जैन संघ संस्थान की बैठक :

श्री राजस्थान जैन संघ संस्थान (मु. सिरोही) की बैठक का आयोजन दिनांक २२ दिसम्बर, १९९१ को जयपुर में किया गया जिसमें संस्थान की गतिविधियों, राजस्थान पब्लिक ट्रस्ट एक्ट, मन्दिरों का जीर्णोद्धार एवं जीवदया आदि विषयों पर विचार किया गया। संस्थान के अध्यक्ष श्री पुखराज जी सा. सिंघवी ने बैठक की अध्यक्षता की तथा श्री लक्ष्मीचन्द जी मेहता, विधायक सांचौर एवं श्री जी. सी. दड्ढा, विशिष्ठ शासन सचिव, गृह सहित संस्थान के विभिन्न संघों से मनोनीत सदस्यगणों ने बैठक में भाग लिया।

यह किसे पता था कि प्रसिद्ध समाजसेवी, प्रखर वक्ता प्रबुद्ध अधिवक्ता, अनेक संस्थाओं से जुड़े हुए श्रीमान् पुखराज जी सा. सिंघवी का यह जयपुर का अंतिम प्रवास होगा। दिनांक ३०-३-९२ को आपका हृदयगति रुकने से देहावसान हो गया। श्रीसंघ द्वारा उन्हें श्रद्धांजलि अर्पित की गई।

श्रद्धांजलि सभा :

महान् तपस्वी जैनाचार्य श्रीमद् विजय ह्रींकार सूरीश्वर जी म. सा. नागेश्वर तीर्थ पर दिनांक २० अप्रेल, १९९२ को कालधर्म को प्राप्त हो गये। जयपुर श्रीसंघ पर आपके अनेक उपकार रहे हैं। दो बार आपने जयपुर में चातुर्मास किया था जिसकी यादें अभी तक तरोताजा हैं। आपकी ही कृपा से यहां प्रारम्भ की गई प्रतिदिन सामूहिक स्नात्र पूजा अनवरत रूप से जारी है।

आपके कालधर्म को प्राप्त होने के समाचार से श्रीसंघ में शोक की लहर दौड़ गई। आपके प्रति श्रद्धा सुमन समर्पित करने हेतु सभा का आयोजन किया गया जिसमें वक्ताओं ने उनके कार्यों को स्मरण करते हुए अपने श्रद्धा सुमन समर्पित किए। उनके तप, जप एवं संयम की अनुमोदनार्थ पंचाह्निका महोत्सव का आयोजन किया गया।

स्थायी गतिविधियाँ

विभिन्न कार्यकलापों का संक्षिप्त विवरण प्रस्तुत करने के पश्चात् संघ के सतत की स्थायी गतिविधियों का विवरण प्रस्तुत कर रहा है।

श्री सुमतिनाथ जिन मंदिर :

श्रीसंघ के [illegible] १७८४ में स्थापित जयपुर नगर में इस [illegible] जिन मंदिर की [illegible] [illegible] सुमति[illegible] [illegible] [illegible] द्वारा [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] विवरण में दिया जा चुका है।

इस वर्ष देव द्रव्य खाते मे ४,१५,६३०)११ रुपये की आय तथा १,७४,८३९)८६ रुपये का व्यय हुआ है। मुख्य द्वार पर चित्रकारी के नवीनीकरण का कार्य पूर्ण कराया गया है। पूजा द्रव्य से सेवा पूजा की सामग्री जुटाने के स्थान पर वर्ष भर भेंटकर्ताओ से सामग्रीवार प्राप्त सहयोग से यह कार्य चलता रहा है।

इस वर्ष का वार्षिकोत्सव दिनाक १० जून, १९९२ को मुख्य रूप से मनाया गया, साथ ही दिनाक ८ से १० जून, १९९२ तक त्रिदिवसीय पूजाओ का आयोजन किया गया। यह भी निश्चय किया गया है कि प्रति वर्ष वार्षिकोत्सव साधर्मी वात्सल्य के साथ धूम-धाम से मनाया जावे।

इस वर्ष के बजट मे मदिर जी की फैरी मे मार्बल लगाने हेतु विशेष प्रावधान किया गया है।

श्री सीमन्धर स्वामी मदिर, जनता कॉलोनी, जयपुर

जैसा कि पूर्व विवरण मे महासमिति द्वारा विदित कराया था कि मदिर के निर्माण कार्य को त्वरित गति से पूर्ण कराने का प्रयास किया जावेगा, उसी के अनुरूप सयोजक श्री तरसेमकुमार जी पारख एव गठित उप समिति की देख-रेख मे वर्ष भर निरन्तर कार्य चलता रहा है। शिखर, रग मण्डप एव गुम्वज का कार्य पूर्ण हो गया है। शेष बचे हुए कार्य को पूरा करने हेतु तो कारीगर निरन्तर कार्य कर ही रहे है, यह भी निश्चय किया गया कि मुख्य द्वार को वदला जावे तथा यहाँ पर मार्वल का तोरण युक्त द्वार वनाया जावे। इसके लिए आदेश दिया जा चुका है।

१६ देवियो सहित माणिभद्र जी, यक्ष यक्षिणी, नाकोडा भैरूजी आदि की नई प्रतिमाएँ भराने का आदेश दिया गया है तथा निर्माण कार्य भी प्रारम्भ कर दिया गया है। इस मदिर निर्माण पर वर्ष ९१-९२ के अत तक १०,७३,४२९)२७ रुपये तथा वर्ष १९९१-९२ मे १,७१,५५०)९५ रुपये व्यय किये गये है।

प्रति वर्ष की भाति इस वर्ष भी वार्षिकोत्सव मगसर वदी १२ को धूम-धाम से मनाया गया। वार्षिकोत्सव के अन्तगत ८,८३२/- रु० की आय तथा ८,२९२/- रु० व्यय हुए हैं।

श्री ऋषभदेव स्वामी का मदिर, वरखेडा

मदिर सयोजक श्री उमरावमल जी पालेचा की देखरेख मे इस जिनालय की व्यवस्था भी निरन्तर सुचारु रूप से चलती रही है। दिनाक २-२-९२ को महासमिति की वैठक वरखेडा मे रखी गई तथा यहा पर जीर्णोद्धार सवधी कार्य का तत्स्थानीय अध्ययन पश्चात् निर्णय लिया गया जिसके अन्तर्गत मदिरजी का जीर्णोद्धार, सामने के

कमरों के ऊपर के जाल को बदलवाने, खुले स्थान पर बाउण्ड्रीवाल को चारों ओर से बन्द करके गेट लगाने, बाथरूम में पानी की व्यवस्था हेतु नल लगाने आदि कार्य कराने का निर्णय लिया गया। सभी कार्यों को रु० ३६,१२०/- व्यय कर पूर्ण करा दिये हैं। बिजली की सर्विस लाइन ठीक कराई गई है। अखण्ड ज्योत जारी है तथा सेवा पूजा का कार्य स्थानीय संयोजक श्री ज्ञानचन्द जी टुंकलिया की देखरेख में वर्ष भर सुचारु रूप से सम्पन्न होता रहा है।

वार्षिकोत्सव दि० १५-३-९२ को मनाया गया जिसमें १८,६७७/- रु० की आय तथा १९,०२०.१० रु० का व्यय हुआ है। वार्षिकोत्सव पूर्ववत् धूमधाम एवं उल्लासमय वातावरण में सम्पन्न हुआ जिसमें बड़ी संख्या में साधर्मी भाई बहिनों ने भाग लिया।

श्री शान्तिनाथ स्वामी जिनालय, चन्दलाई :

इस जिनालय की सेवा-पूजा का कार्य संयोजक श्री विमलकान्त देसाई की देख-रेख में सुचारु रूप से चल रहा है। पिछले बजट में जीर्णोद्धार हेतु विशेष प्रावधान किया गया था लेकिन उसका उपयोग नहीं किया जा सका। इस वर्ष पुनः पचास हजार रु० का प्रावधान किया गया है ताकि जीर्णोद्धार के कार्य को इस वर्ष पूर्ण कराया जा सके।

परम्परागत रूप से इस वर्ष भी मगसर बुदी पंचमी दि. २६-११-९१ को वार्षिकोत्सव का आयोजन किया गया जिसके समस्त व्यय का लाभ एक सद्गृहस्थ की ओर से लिया गया।

श्री जैन श्वे० तपागच्छ उपाश्रय :

श्री ऋषभदेव स्वामी जिनालय, माणजी का चौक में ट्रस्ट द्वारा प्रदत्त मंदिरजी के अग्र भाग में निर्मित उपाश्रय के अधूरे कार्य को पूर्ण कराने सम्बन्धी विवरण गो विगत वर्ष प्रस्तुत किया जा चुका है। कार्य पूर्ण होने पर भी इस हेतु घोषित दानदाताओं से आवश्यक राशि प्राप्त होना शेष है जिसके लिए उनसे निवेदन है कि कृपया शीघ्र उपलब्ध करावें ताकि साधारण खाते से किए गए व्यय का भार पूर्ण हो सके।

श्री आत्मानन्द सभा भवन में स्थित उपाश्रय की व्यवस्था सुचारु रूप से संचालित है।

श्री वर्द्धमान आयम्बिलशाला :

आयम्बिलशाला का कार्य वर्ष भर सुचारु रूप से सम्पादित होता रहा है। इस वर्ष के अन्तर्गत [illegible] रु० की आय तथा [illegible] का व्यय हुआ है। [illegible]

श्री जैन श्वेताम्बर भोजनशाला

आचार्य श्रीमद् विजयकलापूर्ण सूरीश्वर जी म सा की सद्प्रेरणा मे वर्ष १९८५ मे स्थापित भोजनशाला का कार्य सुचारु रूप मे सचालित होता रहा है। वर्ष भर बाहर से पधारे हुए अतिथियो के साथ-साथ स्थानीय लोग भी इसका उपयोग कर रहे है। इस वर्ष ३५,०१४/- रु० की आय तथा २७,९२४ ८५ रु० का व्यय हुआ है। व्यय कम होने का मुख्य कारण सम्पूर्ण चातुर्मास काल मे सघ द्वारा अतिथियो के अतिथि सत्कार भोजन आदि की पृथक् से व्यवस्था करना रहा है।

श्री समुद्रइन्द्रदिन्न साधर्मी सेवा कोष

जैसा कि ऊपर अकित किया गया है कि विगत चातुर्मास मे आचार्य श्रीमद् विजय इन्द्रदिन्न सूरीश्वर जी म सा की सद्प्रेरणा मे इस कोष की स्थापना की गई थी। दानदाताओ से प्राप्त आर्थिक सहयोग से कुल मिलाकर २,६७,३१७/- रु० इस कोष मे एकत्रित हुए हैं। इस कोष के सचालन हेतु एक उप समिति का गठन किया गया है।

साधर्मियो को स्वावलम्बी बनाने, वृद्धावस्था मे भरण-पोषण, शिक्षा, चिकित्सा हेतु आर्थिक सहायता उपलब्ध कराने मे इस कोष का उपयोग किया जाना है। स्व-रोजगार प्रशिक्षण योजना के अन्तर्गत इस वर्ष दिनाक १७ जून से ११ जुलाई, १९९२ तक प्रशिक्षण शिविर का आयोजन किया गया। इस शिविर मे नगीने विदाई, मोती के जेवर बनाना, सिलाई, कटाई, मेहन्दी रचना, खाद्य पदार्थो का निर्माण आदि विभिन्न विषयो का प्रशिक्षण दिया गया। शिविर का समापन समारोह दिनाक १२ जुलाई, १९९२ को आयोजित किया गया जिसके मुख्य अतिथि श्री के एल जैन, अध्यक्ष, जयपुर स्टॉक एक्सचेज तथा विशिष्ट अतिथि श्री एम आर सिघवी, समाचार सम्पादक, दूरदर्शन थे। इस समारोह मे प्रशिक्षणार्थियो को प्रमाण-पत्र सहित शिविर सचालन तथा प्रशिक्षण मे सेवा भावना से नि शुल्क योगदानकर्ताओ को स्मृति चिह्न भेट कर बहुमान किया गया। शिक्षण मत्री श्री अशोककुमार जैन सहित सुश्री सरोज कोचर की सेवाएँ विशेष उल्लेखनीय रही है। इस शिविर का सचालन का आर्थिक भार साधारण मे वहन किया गया है।

इस शिविर के पश्चात् दिनाक २१ से २५ जुलाई १९९२ तक राखी निर्माण के प्रशिक्षण का आयोजन किया गया तथा राखी सहित प्रशिक्षणार्थियो द्वारा निर्मित वस्तुओ की बिक्री एव प्रदर्शनी का आयोजन श्री आत्मानन्द सभा भवन तथा कुशल भवन मे किया गया। प्रशिक्षणार्थी एक महिला को विदाई की मशीन उपलब्ध कराई गई है तथा भरण-पोषण, शिक्षा एव चिकित्सा हेतु योगदान किया गया है। सिलाई के प्रशिक्षण की स्थायी व्यवस्था पुन प्रारम्भ की जा रही है।

इस कोष में अधिक से अधिक राशि प्राप्त हो तथा साधर्मी भाइयों की अधिक से अधिक सेवा की जा सके, इस हेतु उदारमना सहयोग प्रदान करने की विनती है।

श्री साधारण खाता :

यह बार-बार दोहराना पुनरावृत्ति ही होगी लेकिन आप महानुभाव भलीभांति परिचित हैं कि यह एक ऐसा सीगा है जो सबसे अधिक व्यय-भार युक्त है। साधु-साध्वियों की वैय्यावच्च, संघ भक्ति, उपाश्रयों की व्यवस्था, उद्योगशाला, मणिभद्र प्रकाशन सहित अनेक प्रकार के व्यय इसी सीगे के अन्तर्गत किये जाते हैं। उदारमना दानदाताओं के सहयोग से प्रति वर्ष की भांति इस वर्ष भी यह सीगा टूट से मुक्त है। पिछले वर्ष के चातुर्मास हेतु पृथक् से चिट्ठा कराया गया था जिसमें राशि रु. २,२४,०३४/७० की आय तथा २,५०,४५७/१३ रु० का व्यय हुआ। आय से अधिक खर्च हुई राशि का समायोजन इसी सीगे के अन्तर्गत किया गया। इसके अतिरिक्त इस वर्ष इस सीगे में कुल १,९८,३४५.७४ रु० का व्यय तथा २,१२,६८२.६८ रु० की आय हुई है।

पुस्तकालय, वाचनालय एवं धार्मिक पाठशाला :

वर्ष भर पुस्तकालय एवं वाचनालय की व्यवस्था सुचारु रूप से संचालित होती रही है। धार्मिक पाठशाला भी वर्ष भर सुचारु रूप से संचालित होती रही है तथा बालकों की संख्या में वृद्धि हुई है। विगत वर्ष के चातुर्मास एवं इस वर्ष लग रहे बाल संस्कार शिविरों के कारण बालकों में धार्मिक क्रियाकलापों के प्रति रुचि बढ़ी है। बालकों को प्रोत्साहित करने हेतु शिविर के समय बालकों को अल्पाहार कराने तथा भेंट आदि देकर प्रोत्साहित करने का भी अनुकूल प्रभाव पड़ा है।

श्री मणिभद्र प्रकाशन :

यह सन्तोष का विषय है कि इस संस्था द्वारा प्रति वर्ष प्रकाशित की जा रही स्मारिका का प्रकाशन यथा समय सम्पन्न हो रहा है। यह ३४वां पुष्प आपकी सेवा में समर्पित है। आचार्य भगवन्तों, मुनिगणों, साध्वीजी म०, विद्वान लेखकों की सेवा में लेख भेजने हेतु विनती पत्र भेजे जाते हैं फिर भी सभी से निवेदन है कि अपनी रचनायें प्रति वर्ष श्रावण वदी तक भिजवा दें तो इसे और भी उपयोगी, पठनीय एवं संग्रहणीय बनाया जा सकेगा। विज्ञापनदाताओं को आर्थिक सहयोग के लिये हार्दिक धन्यवाद ज्ञापित करने के साथ-साथ यह भी अपेक्षा रखती है कि भविष्य में भी इसी प्रकार उदारमना सहयोग प्राप्त होता रहेगा।

गोशाला कॉलोनी में मंदिर निर्माण योजना :

इस सम्बन्ध में पूर्व विवरण में दिये गये [illegible]

[illegible]

[illegible] :

[illegible]

श्री सघ की ही नही जयपुर के अन्य सघो एव सस्थाओ के कार्यो मे भी मण्डल का योगदान एव सेवा कार्य प्रशसनीय है । जम्बू-स्वामी नाटक का मचन, विविध झाँकियो की सरचना, वार्षिकोत्सवो मे निष्ठापूर्वक किया गया सहयोग, मण्डल के युवा सदस्यो की मेहनत एव लगन अनुकरणीय है ।

सघ की आर्थिक स्थिति

सघ की आर्थिक स्थिति दानदाताओ एव भक्तिकर्ताओ के उदारमना सहयोग से न केवल सुदृढ है अपितु उत्तरोत्तर प्रगति की ओर अग्रसर है । वर्ष १९९१–९२ के आय-व्यय मे उल्लेखनीय वृद्धि हुई है । विगत वर्ष की ७,७०,९३६)९६ की समग्र आय के मुकाबले इस वर्ष १४,८१,३९१)२१ की आय हुई है । व्यय खाते मे रु० ११,३५,०१२)१३ की राशि व्यय हुई है । २,७५,४४८) रु० स्थायी कोष मे जमा कराने के पश्चात् जिनमे मुख्य रूप से सार्धर्मी सेवा कोष, आयम्बिलशाला की स्थायी मितिया, फोटू, ज्योत आदि हैं, ७२,७७१)९८ रु० की शुद्ध बचत हुई है ।

व्यय सीगे के अन्तर्गत अन्य सस्थाओ को भी आर्थिक सहयोग उपलब्ध कराया गया है ।

आशा है कि भविष्य मे भी दानदाताओ का इसी प्रकार का मुक्तहस्त एव उदारमना आर्थिक सहयोग होता रहेगा ताकि सघ के कार्य सचालन के साथ-साथ अन्य योजनायें प्रारम्भ की जा सके ।

धन्यवाद ज्ञापन

सघ की विगत वर्ष की गतिविधियो का विवेचन प्रस्तुत करते हुये सघ के कार्यो को सफलतापूर्वक सचालित करने मे प्राप्त सहयोग के लिये सभी के प्रति महा-समिति धन्यवाद ज्ञापित करना अपना परम कर्तव्य समझती है ।

उपरोक्त विवरण मे प्रसगवश आये हुये भक्तिकर्ताओ, दानदाताओ, पदाधिकारियो, कार्यकर्ताओ का नामोल्लेख ही हो सका है लेकिन श्रीसघ के प्रत्येक सदस्य का जो हार्दिक सहयोग, सहकार एव विश्वास प्राप्त हुआ है उसी से यह सब कुछ कर सकना सम्भव हो सका है ।

श्री राजेन्द्रकुमारजी चतर, सी० ए० को सघ के अकेक्षण कार्य को सम्पन्न करने, श्री इन्दरचन्दजी चोरडिया परिवार को माइक आदि की सुचारु व्यवस्था तथा सघ के कर्मचारी वर्ग को उनके द्वारा मेहनत लगन एव सेवा भाव मे की गई सेवाओ के लिये धन्यवाद ज्ञापित करना महासमिति अपना कर्तव्य समझती है तथा ज्ञात-अज्ञातवश हुई भूलो के लिये श्रीसघ मे क्षमायाचना करती है ।

समापन

वर्ष १९९१–९२ के लिये कार्यरत महासमिति के प्रथम वर्ष के कार्यकलापो, गतिविधियो एव उपलब्धियो का यह विवरण आपके समक्ष प्रस्तुत करते हुये यह वार्षिक विवरण एव अकेक्षित आय-व्यय तालिका आपकी सेवा मे प्रस्तुत करता हूँ ।

जय वीरम् ।

Auditors' Report

1 (Form No. 10-B)

(See Rule 17 B)

AUDIT REPORT UNDER SECTION 12 A (b) OF THE INCOME TAX ACT, 1961 IN THE CASE OF CHARITABLE OR RELIGIOUS TRUSTS OR INSTITUTION

We have examined the Balance Sheet of Shri JAIN SHWETAMBER TAPAGACH SANGH, Ghee Walon ka Rasta, Jaipur as at 31st March, 1992 and the Income and Expenditure Account for the year ended, on that date which are in agreement with the books of account maintained by the said trust or institution.

We have obtained all the information and explanations which to the best of our knowledge and belief were necessary for the purpose of audit. In our opinion proper books of accounts have been kept by the said Sangh, subject to the comments that old immovable properties & jewellery have not been valued and included in the Balance Sheet and income & expenditure accounted for on receipt basis as usual

In our opinion and to the best of our information and according to information given to us, the said accounts subject to above give true and fair view :—

1. In the case of the Balance Sheet of the state of affairs of the above named trust/institution as at 31st March, 1992 and

2. In the case of the Income and Expenditure account of the profit or loss of its accounting year ending on 31st March 1992

The prescribed particulars are annexed hereto

For [illegible] & COMPANY

[illegible]

[illegible]

[illegible]

श्री जैन श्वेताम्बर तपागच्छ सघ

चिट्ठा

कर निर्धारण

गत वष की रक्म	दायित्व	चालू वष की रक्म
51,000 00	श्री आयम्बिल शाला जीर्णोद्धार फण्ड	51,000 00
	श्री साधर्मिक सेवा कोष	2,61,822 00
12,16,335 26		15,21,631 24

नोट उपरोक्त चिट्ठे मे सस्था की पुरानी चल व अचल सम्पत्ति जैसे वर्तन, मन्दिर की पुरानी जायदाद व जेवर वगैरह शामिल नही हैं जिनका कि मूल्याकन नही किया गया है ।

हीरा भाई चोधरी	मोतीलाल भडकतिया	दानसिह कर्णावट
अध्यक्ष	सघ मत्री	अर्थ मत्री

घीवालों का रास्ता, जौहरी बाजार, जयपुर

1-4-91 से 31-3-92 तक

वर्ष 1992–93

गत वर्ष की रकम	सम्पत्तियाँ	चालू वर्ष की रकम
40,015.34	श्री रोकड़ बाकी	1,73,618.27
12,16,335.26		15,21,631.24

भगवानसहाय पल्लीवाल
हिसाब निरीक्षक

[illegible] एण्ड कम्पनी
Sd/- आर० के० [illegible]
(आर० के० [illegible])
साझी

श्री जैन श्वेताम्बर तपागच्छ सघ

आय-व्यय खाता

कर निर्धारण

ान वर्ष का खर्च	व्यय		इस वष का खच
73,286 85	श्री मन्दिर खर्च खाते नाम		1,74,836 89
	आवश्यक खच	71,647 79	
	विशेष खर्च	1,03,189 10	
5,260 00	श्री माणिभद्र खर्च खाते नाम		200 00
94,808 46	श्री साधारण खाते नाम		1 68,345 74
	आवश्यक खच	66,101 94	
	विशेष खर्च	1,02,243 80	
10,298 50	श्री ज्ञान खाते नाम		64,341 90
	आवश्यय खर्च	–23,915 75	
	विशेप खर्च	40,426 15	
32,916 75	श्री आयम्बिल खाते नाम		32,722 10
	आवश्यक खच	32,722 10	
	विशेप खर्च		
2,201 00	श्री जीव दया खाते नाम		13,102 50
2,100 00	श्री आयम्बिल फोटो खाते नाम		2,608 00
5,284 95	श्री बरखेडा मन्दिर खाते नाम		3,628 95
15,502 00	श्री बरखेडा साधारण खाते नाम		19,020 60
1,065 00	श्री बरखेडा जोत खाते नाम		3,675 00
525 00	श्री शिविर खाते नाम		—
3,714 20	श्री बरखेडा जीर्णोद्धार खाते नाम		36,120 00
12,618 96	श्री जनता कॉलोनी मन्दिर खाते नाम		16,061 72

घीवालों का रास्ता, जोहरी बाजार, जयपुर

1-4-91 से 31-3-92 तक

वर्ष 1992–93

गत वर्ष की आय	आय		इस वर्ष की आय
2,40,449.14	**श्री मन्दिर खाते जमा**		4,15,930.11
	श्री भण्डार खाता	3,55,426.13	
	श्री पूजन खाता	14,618.13	
	श्री किराया खाता	1,800.00	
	श्री ब्याज खाता	41,467.55	
	श्री चंदलाई खाता	722.00	
	श्री जोत खाता	784.75	
	श्री मोडाला खाता	1,111.00	
39,224.23	**श्री माणिभद्र खाते जमा**		47,468.10
1,31,602.60	**श्री साधारण खाते जमा**		2,12,682.68
	श्री भेंट खाता	1,66,586.88	
	श्री किराया खाता	9,690.00	
	श्री माणिभद्र प्रकाशन खाता	8,592.00	
	श्री ब्याज खाता	26,812.80	
	श्री साधर्मी भक्ति	1,001.00	
31,743.40	**श्री ज्ञान खाते जमा**		97,627.70
	श्री भेंट खाता	90,057.70	
	श्री ब्याज खाता	6,469.00	
	श्री पाठशाला खाता	1,101.00	
[illegible]	**श्री साधर्मिक खाते जमा**		[illegible]
	श्री भेंट खाता	[illegible]	
	श्री ब्याज खाता	[illegible]	
	श्री किराया खाता	[illegible]	

श्री जैन श्वेताम्बर तपागच्छ सघ

आय-व्यय खाता

कर निर्धारण

गत वर्ष का खर्च	व्यय	इस वर्ष का खर्च
10,498 50	श्री जनता कॉलोनी साधारण (साधर्मी वात्सल्य) खाते नाम	8,292 00
80,394 26	श्री जनता कॉलोनी मन्दिर निर्माण खाते नाम	1,71,550 95
42,505 75	श्री भोजन शाला खाते नाम	27,924 85
1,83,429 00	श्री उपाश्रय खाते नाम	81,479 39
—	श्री चातुर्मास खाते नाम	2,50,457 13
4,549 66	श्री वैयावच्च खाते नाम	11,102 21
—	श्री आयम्बिल जीर्णोद्धार खाते नाम	49,542 20
1,90,390 87	श्री साधर्मिक खाते नाम	4,654 10
—	श्री शुद्ध बचत सामान्य कोष में हस्तान्तरित की गई	72,771 98
7,71,349 81		12,12,438 21

हीरा भाई चौधरी
अध्यक्ष

मोतीलाल भडकतिया
सघ मत्री

दानसिंह कर्णावट
अर्थ मत्री

घीवालों का रास्ता, जौहरी बाजार, जयपुर

1-4-91 से 31-3-92 तक

वर्ष 1992–93

गत वर्ष की आय	आय	इस वर्ष की आय
2,111.28	श्री गुरुदेव खाते जमा	1,135.93
2,404.25	श्री शासन देवी खाते जमा	2,585.79
2,627.05	श्री जीव दया खाते जमा	14,183.25
11,411.00	श्री आयम्बिल फोटो खाते जमा	16,165.00
6,037.65	श्री बरखेड़ा मन्दिर खाते जमा	8,893.35
14,435.55	श्री बरखेड़ा साधारण (साधर्मी वात्सल्य) खाते जमा	18,677.00
4,080.90	श्री बरखेड़ा जोत खाते जमा	3,800.25
—	श्री शिविर खाते जमा	—
8,287.85	श्री जनता कॉलोनी मन्दिर खाते जमा	11,498.85
8,055.05	श्री जनता कॉलोनी साधारण (साधर्मी वात्सल्य) खाते जमा	8,832.00
16,674.26	श्री जनता कॉलोनी मन्दिर निर्माण खाते जमा	28,200.00
44,408.50	श्री भोजन शाला खाते जमा	35,014.00
67,912.00	श्री उपाश्रय खाते जमा	12,371.00
—	श्री चातुर्मास खाते जमा	2,24,034.70
680.00	श्री वैयावच्च खाते जमा	62.00
—	श्री आयम्बिल जीर्णोद्धार खाते जमा	1,311.00
—	श्री साधर्मिक सेवा कोष-ब्याज की जमा	6,[illegible]5.00
7,71,340.81		12,12,438.21

[illegible]

S/- [illegible]

([illegible])

[illegible]

[illegible]

[illegible]

"संतो की वाणी महिमा"

श्री दर्शन छजलानी

सतों की वाणी पर गर देश चला होता,
बेकसूर न मरते, सबका ही भला होता ।।

आतंकवाद और उग्रवाद से असुर नहीं होते,
उपदेशों का अमृत गर एक बार चखा होता ।।

खंडित न हो पाती विवेक और बुद्धि,
उपदेशों का चन्दन गर शीश मला होता ।।

नफरत की नागफनी नहीं उठाती सिर,
नेह के तुलसी चौरे पर गर दीप जला होता ।।

मणि से ज्यादा मूल्यवान है सतों के "दर्शन",
उनके पद चिह्नों पर गर पथिक चला होता ।।

With best compliments

from

M/s Shanti Lal & Co.

BANSAL BHAWAN
HANUMANJI KA RASTA
JAIPUR - 302 003

◇

Phone O 563571, R 46796
Cable Kharad Jaipur □ Telex 2406 REAL IN